Shree R. L. Shant

वितस्ता

सम्पादक
डॉ० रमेश कुमार शर्मा

हिन्दी परिषद
स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग
कश्मीर विश्व विद्यालय कश्मीर
की
मुख-पत्रिका

शिशिर अङ्क

खंड ६, अङ्क १

क्रम

सम्मतियाँ

सम्पादकीय

वितस्ता

(१९७० ई०, शिशिर-अङ्क)

अकामो धीरो अमृतः स्वयंभू
रसेन तृप्तो न कुतश्चनोनः ।
तमेव विद्वान् न बिभाय मृत्योर्
आत्मानं धीरम् अजरं युवानम् ।।

अथर्व १०/८/४४

[कामनाहीन, धीर, अमर, स्वयंभू, रसों से तृप्त, जिसे किसी का भी अभाव नहीं है, ऐसा है वह । जिसने उसे जान लिया है, वह मृत्यु से भयभीत नहीं होता (ऐसा है वह) आत्मा-धीर, अजर तथा (सर्वदा) यौवन से युक्त]

नज़ीर अकबराबादी

**

कन्हैयाजी की खेल कूद

तारीफ़ करूँ अब मैं क्या उस मुरली अधर बजैय्या की
नित सेवा-कुंज फिरैय्या की, और बन-बन गऊ-चरैय्या की
गोपाल, बिहारी, बनवारी, दुःख हरना, महैर करैय्या की
गिरधारी, सुन्दर, श्याम वरन और हलधर जू के भैय्या की
यह लीला है उस नन्दललन, मनमोहन, जसुमति-छैय्या की
रख ध्यान सुनों दंडौत करो, जै बोलो किशन-कन्हैय्या की ।।

इक रोज़ खुशी से गेंदतड़ी ले, मोहन जमुना तीर गये
वां खेलन लागे हंस-हंस के, यह कह कर ग्वाल और बालन से
जो गेंद पड़े वा जमुना में, फिर जाकर लावे जो फैंके
यह आप ही अन्तरजामी थे, क्या उनका भेद कोई पावे
इह लीला है उस नन्द-ललन, मनमोहन जसुमति-छैय्या की
रख ध्यान सुनो दंडौत करो, जै बोलो किशन-कन्हैय्या की ।।

वां किशन मदन मोहन ने, सब ग्वालन से यह बात कही
और आप ही झप गेंद उठा उस काली दह में डाल दई
फिर आप ही झप से कूद पड़े और जमुना जी में डुबकी ली
सब ग्वाल सखा हैरान रहे, पर भेद न समझे एक रती
यह लीला है उस नन्द-ललन, मनमोहन जसुमति-छैय्या की
रख ध्यान सुनो दंडौत करो, जै बोलो किशन-कन्हैय्या की ।।

यै बात सुनी ब्रज नारिन ने, तब घर-घर इसकी धूम मची
नन्द और जसोदा आ पहुँचे, सुध भूल गई अपने तन की

आ जमुना पर गुल-शोर हुआ, और ठठ्ठ बंधे और भीड़ लगी
कोई आँसू डाले, हाथ मले, पर भेद न जाने कोई भी
यह लीला है उस नन्द-ललन, मनमोहन, जसुमति-छैय्या की
रख ध्यान सुनो दंडौत करो, जै बोलो किसन-कन्हैय्या की ।।

जिस दह में कूदे मनमोहन, वां आन छिपा था इक काली
सिर पांव से उनके आ लिपटा उस दह के भीतर देखते ही
फन मारे, पहुँचा ज़ोर किये, और पहरों तक वाँ कुश्ती की
पुकारें लीं बल तेज़ किये, पर किशन रहे वाँ हँसते ही
यह लीला है उन नन्द-ललन, मनमोहन, जसुमति-छैय्या की
रख ध्यान सुनो दंडौत करो, जै बोलो किशन-कन्हैय्या की ।।

अब काली ने सौ पेच किये, फिर कला वां श्याम ने की
इस तौर बढ़ाया तन अपना, जो उसका निकसन लागा जी
फिर नाथ लिया उस काली को, इक पल भर में, ना देर करी
वह हार गया और अस्तुत की, हर नागिन भी फिर पाँव पड़ी
यह लीला है उस नन्द-ललन, मनमोहन जसुमति छैय्या की
रख ध्यान सुनो दंडौत करो, जै बोलो किशन-कन्हैय्या की ।।

उस दह में सुन्दर, श्यामवरन उस काली को जब नाथ चुके
ले नाथ को उसकी हाथ अपने, फिर हर फन ऊपर नृत्त किये
कर बस में अपने काली को, मुसक्याते, मुरली अधर धरे
जब बाहर आये मनमोहन, सब खुश हो, जै जै बोल उठे
यह लीला है उस नन्द-ललन, मनमोहन, जसुमति-छैय्या की
रख ध्यान सुनो दंडौत करो, जै बोलो किशन-कन्हैय्या की ।।

थे जमुना पर उस वक्त खड़े वां, जितने आकर नर-नारी
देख उनको सब खुशहाल हुये, जब बाहर निकले बनवारी
दुःख-चिन्ता मन से दूर हुये, आनन्द की आई फिर बारी
सब दर्शन पाकर शाद हुये और बोले "जै जै बलिहारी"
यह लीला है उस नन्द-ललन, मनमोहन, जसुमति-छैय्या की
रख ध्यान सुनो दंडौत करो, जै बोलो किशन-कन्हैय्या की ।।

नन्द और जसोदा के मन में, सुध भूली-बिसरी फिर आई
सुःख चैन हुये, दुःख भूल गये, कुछ दान और पुन्न की ठहराई
सब ब्रज-बासिन के हिरदे में, आनन्द-खुशी उस दम छाई
उस रोज़ उन्होंने यह भी 'नज़ीर', इक लीला अपनी दिखलाई
सब लीला है उस नन्द-ललन, मनमोहन, जसुमति-छैय्या की
रख ध्यान सुनो दंडौत करो जै बोलो किशन-कन्हैय्या की ।।

+ ⌣ + ⌣ +
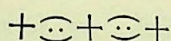
जिनके कान नहीं दिखाई देते वे अण्डे देते हैं ; जिनके दिखाई देते हैं वे बच्चों को दूध पिलाते हैं । जो कानों के कच्चे होते हैं वे 'दूध पीते' हैं और फिर से अपने अण्डे में लौट जाते हैं ।

—सम्पादक

● ● ●

अधर्माभिभावात्कृष्ण प्रदुष्यन्ति कुलस्त्रियः ।
स्त्रीषु दुष्टासु वार्ष्णेय जायते वर्णसंकरः ।।

अर्जुनोवाच; गीता २-४१

(हे कृष्ण ! पाप के अधिक बढ़ जाने से कुल की स्त्रियाँ दूषित हो जाती हैं और स्त्रियों के दूषित होने पर (उस समाज में) वर्ण-संकर उत्पन्न होता है ।)

● ● ●

गयी नारि जो खाय मिठाई, गया मरद जो खाय खटाई ।

—ब्रज की पुरानी कहावत

● ● ●

सराय रहने-इश्क ओ नागज़ीरे-उल्फ़ते-हस्ती
इबादत बर्क की करता हूँ, औ' अफसोस हासिल का ।

—ग़ालिब

हिन्दी-परिषद्

१९६८-६९ की गतिविधियाँ

++

अक्तूबर १९६८ में हिन्दी परिषद् का गठन किया गया। सर्वसम्मति से यह निर्णय किया गया कि विभाग के एम० ए० (उत्तरार्द्ध एवं पूर्वार्द्ध) के विद्यार्थी तथा अनुसंधित्सु-गण परिषद् के सामान्य सदस्य होंगे। इसके अतिरिक्त परिषद् का नियमित कार्य चलाने हेतु निम्नलिखित पदेन एवं निर्वाचित पदाधिकारी निश्चित किये गए :—

संरक्षक, अध्यक्ष, सभापति, उपसभापति, अनुसंधित्सु-प्रतिनिधि, मन्त्री, उपमन्त्री (सांस्कृतिक-कार्यक्रम) तथा कोषाध्यक्ष। यह नियम बनाया गया कि जिस विद्यार्थी के पूर्वार्द्ध की परीक्षा में सर्वाधिक अंक होंगे, उसे मन्त्री नियुक्त किया जायेगा तथा बी० ए० की परीक्षा में, हिन्दी में, जिस विद्यार्थी के सर्वाधिक अंक होंगें, उसे उपमन्त्री नियुक्त किया जायेगा। कोषाध्यक्ष का निर्वाचन पूर्वार्द्ध की कक्षा में से किया जाना निश्चित हुआ, तथा निर्णय किया गया कि जिस विद्यार्थी ने पूर्वार्द्ध में संगीत एवं अन्य सांस्कृतिक कार्यों में सर्वाधिक रुचि प्रदर्शित की हो एवं सफलता पाई हो, उसे उप-मंत्री सांस्कृतिक कार्यक्रम नियुक्त किया जायेगा। इस निर्णय के अनुसार इस वर्ष के पदेन पदाधिकारी इस प्रकार हुए :—

संरक्षक—परमश्रेष्ठ श्री भगवान सहाय (पदेन)
अध्यक्ष—श्री नूरउद्दीन (पदेन)
सभापति—डा० रमेशकुमार शर्मा—विभाग के अध्यक्ष (पदेन)
उपसभापति—डा० भूषणलाल कौल—विभाग के प्राध्यापक (पदेन)

यह निर्णय किया गया कि अध्यक्ष के अतिरिक्त जो शिक्षक विभाग में हों और परिषद् के सदस्य बनें, वे बारी-बारी से प्रतिवर्ष उपसभापति का कार्य करेंगे।

अनुसंधित्सु-प्रतिनिधि—श्री मोहनलाल बाबू।
मन्त्री—कुमारी विजयमोहिनी कौल।
उपमन्त्री—कुमारी पुष्पलता दर।
उपमन्त्री सांस्कृतिक कार्यक्रम—कुमारी बसन्तीज़ाला।
कोषाध्यक्ष—श्री मोहनलाल दास

इस प्रकार सभी पदेन एवं निर्वाचित पदाधिकारियों को मिलाकर परिषद् की कार्य-कारिणी का गठन किया गया। यह भी निश्चित किया गया कि परिषद् की सामान्य बैठक प्रति शनिवार हुआ करेगी, तथा मास में एक बैठक सांस्कृतिक कार्यक्रम की भी हुआ करेगी। इस निर्णय के अनुसार परिषद् की कुल ३७ सामान्य एवं विशेष बैठकें हुईं। प्रथम बैठक ७. ९. ६८ को उपसभापति डा० भूषणलाल कौल के सभापतित्व में हुई। इसमें परिषद् के उद्देश्यों एवं गठन के विषय में विद्यार्थियों को अवगत कराया गया। इसके पश्चात् जो मुख्य-मुख्य बैठकें परिषद् के तत्वावधान में संयोजित हुईं, उनका यथाक्रम विवरण इस प्रकार है :—

दिनांक १६ सितम्बर १९६८ को परिषद् की एक विशेष बैठक दिल्ली विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के आचार्य एवं अध्यक्ष डा० नगेन्द्र नगाइच के सम्मान में नियोजित हुई। इसमें उन्होंने "आधुनिक साहित्य के मूल्यांकन के मापदण्ड क्या होने चाहिए", इस विषय पर विद्यार्थियों के समक्ष अपने विचार रखे।

११ अक्तूबर १९६८ ई० को परिषद् की दूसरी विशेष बैठक हिन्दी के प्रसिद्ध कवि डा० रामधारीसिंह 'दिनकर' के सम्मान में नियोजित हुई। इसमें उन्होंने "आधुनिक कविता के स्वरूप" पर अपने विचार प्रकट किये तथा "परशुराम की प्रतीक्षा" शीर्षक से एक कविता भी सुनाई।

३० अक्तूबर ६८ को तीसरी विशेष बैठक हिन्दी-विभाग, जम्मू के अध्यक्ष पंडित जगन्नाथ तिवारी के सम्मान में हुई। इसमें उन्होंने हिन्दी विभाग की उत्तरोत्तर उन्नति की कामना की तथा विद्यार्थियों की बढ़ती हुई संख्या को देखकर प्रसन्नता प्रकट की।

पहली नवम्बर १९६८ ई० को उपसभापति डा० भूषणलाल कौल को पी-एच० डी० की उपाधि मिलने के उपलक्ष्य में एक विशेष उत्सव का आयोजन किया गया। उत्सव के मुख्य अतिथि उपकुलपति डा० जा० ना० भान थे।

८ मार्च १९६९ ई० को परिषद् की एक विशेष बैठक हिन्दी के प्रसिद्ध ऐतिहासिक उपन्यासकार डा० वृन्दावनलाल वर्मा के आकस्मिक निधन पर शोक प्रकट करने के हेतु हुई। परिषद् की ओर से सहानुभूति एवं शोक का प्रस्ताव पारित किया गया, जो दिवंगत आत्मा के सन्तप्त परिवार को भेजा गया।

२ अप्रैल ६९ को एक और मुख्य बैठक श्री मुहम्मद नईम खाँ के सम्मान में हुई। इसमें नईम साहब ने विद्यार्थियों को अपने रचे कुछ गीत तथा कविताएँ सुनाईं।

१९ अप्रैल को एक विशेष बैठक उपमंत्री (सांस्कृतिक कार्यक्रम) कुमारी बसन्ती जाला के बहनोई "श्री तेजकिरन ककरू" के असामयिक निधन पर शोक प्रकट करने के हेतु हुई। बैठक में एक शोक-प्रस्ताव पारित किया गया जो बाद में संतप्त परिवार को भेजा गया।
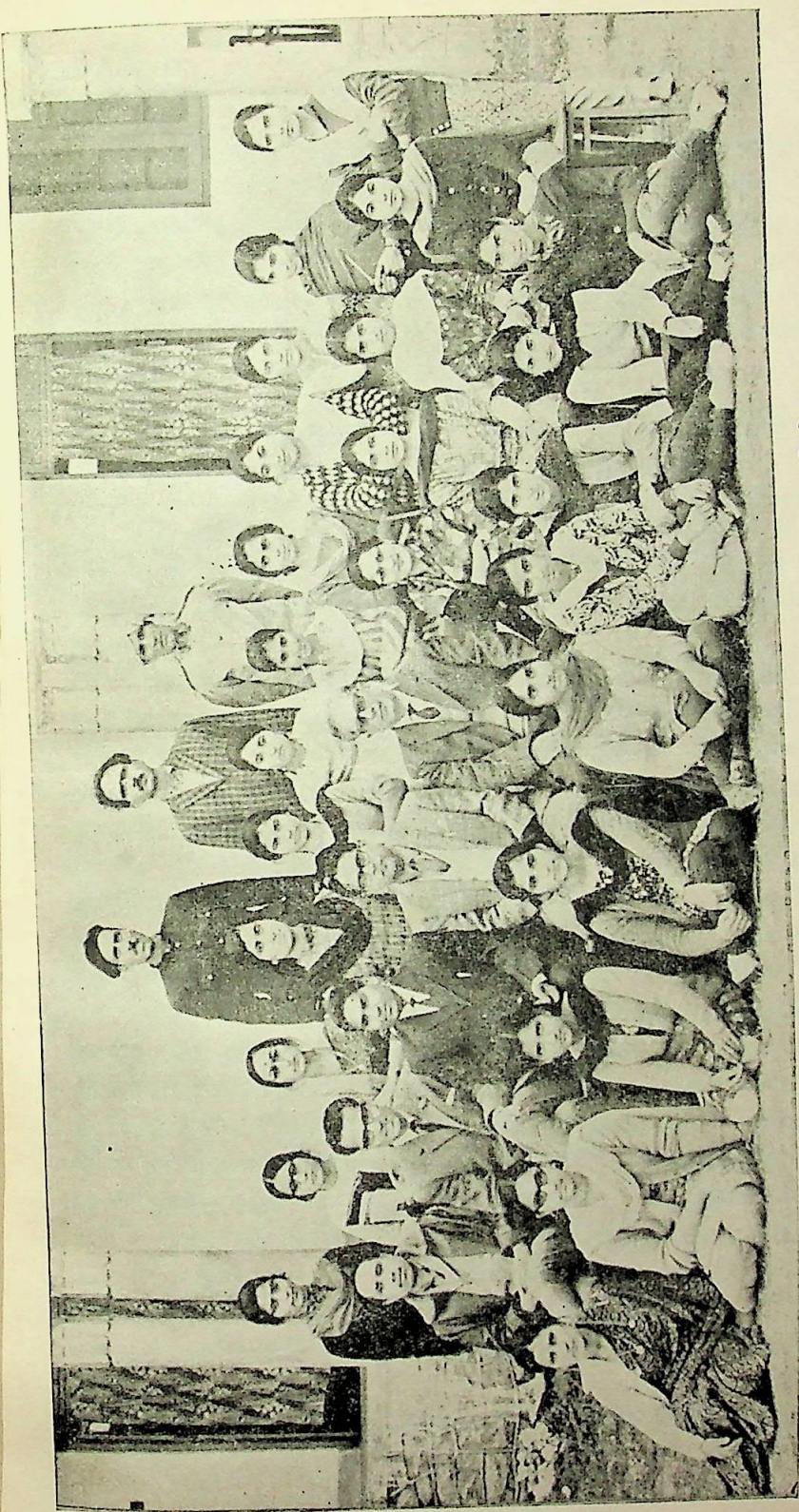
एम० ए० उत्तरार्द्ध (१९६८-६९) के छात्र विभाग के शिक्षकों तथा उपकुलपति के साथ।

१७ जून ६६ को एक और विशेष बैठक बिहार के राजेन्द्र कालेज में हिन्दी के विभागाध्यक्ष डा० मुरलीधर श्रीवास्तव के सम्मान में नियोजित हुई। इसमें उन्होंने "हिन्दी राष्ट्रभाषा होनी चाहिए अथवा नहीं" इस विषय पर विद्यार्थियों के समक्ष अपने कुछ विचार रखे।

२८ जून को एक बैठक कश्मीर के प्रसिद्ध हिन्दी कवि श्री मोहन निराश के सम्मान में हुई। इसमें उन्होंने अपनी कविताओं का संक्षिप्त सा परिचय देते हुए विद्यार्थियों को अपने रचे कुछ गीत एवं कविताएँ सुनाईं।

२० जुलाई ६६ को अहरबल में दुर्घटनाग्रस्त हो जाने वाले विद्यार्थियों की असामयिक मृत्यु पर शोक प्रकट करने के लिए एक शोक सभा हुई।

४ अक्तूबर ६६ को परिषद् की एक और विशेष बैठक "गांधीजी की जन्म शताब्दी" के उपलक्ष्य में नियोजित की गई। इसमें राजनीति-शास्त्र के विभागाध्यक्ष श्री परिहार, उर्दू विभाग के डा० शकीलुर्रहमान तथा सभापति डा० रमेशकुमार शर्मा के भाषण हुए।

इसके अतिरिक्त परिषद् की अन्य जितनी भी बैठकें हुईं उनमें विभाग के विद्यार्थियों ने अपनी लिखी रचनाएँ सुनाईं तथा समय-समय पर सभापति, उपसभापति, डा० मोहिनी कौल तथा डा० मुहम्मद अयूब खाँ ने भी विद्यार्थियों को अपनी रचनाएँ सुना कर लाभान्वित किया। इस वर्ष विद्यार्थियों द्वारा १३ कहानियाँ, २८ कविताएँ, ५ लेख तथा ३ रोचकवार्त्ताएँ सुनाई गईं। ये सभी मौलिक रचनाएँ थीं। इनमें से सबसे अधिक प्रशंसनीय एवं सर्वश्रेष्ठ रचनाओं पर पारितोषिक दिये जाने की घोषणा की गई और उन्हें विभागीय पत्रिका "वितस्ता" में स्थान दिया गया। परिषद् के जिन उद्देश्यों का ज्ञापन आरम्भ में किया गया था, लगभग सभी में उसे सफलता प्राप्त हुई। इस वर्ष विद्यार्थियों को सहायता हेतु १४२ रु० तथा कर्जे के रूप में २०० रु० दिये गये।

दिनांक ११ नवम्बर १६६६ मंगलवार को इस सत्र की परिषद् का समापन समारोह तथा आगामी सत्र का उद्‌घाटन समारोह प्रोफेसर श्री श्रीकण्ठ कौल तोषखानी के सभापतित्व में हुआ। इस समारोह का श्रीगणेश "सरस्वती-वन्दना" द्वारा हुआ। तदुपरान्त सभापति ने सदस्यों का परिचय श्री तोषखानीजी से कराया और परिषद् के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों पर प्रकाश डाला। इसके उपरान्त मन्त्री कुमारी विजय मोहिनी कौल ने गतवर्ष की वार्षिक रिपोर्ट पढ़कर सुनाई। इसके पश्चात् साहित्यिक कार्यक्रम हुआ, जिसमें श्री प्राणनाथ भट्ट (पूर्वार्द्ध) की कश्मीरी कविता "सु होशन ब व्यसरान"; नैनसी दर (उत्तरार्द्ध) की कविता "मोतियों का भार"; मन्त्री कुमारी विजयमोहिनी कौल की कविता "क्यों"; बिमला बाबू (पूर्वार्द्ध) का प्रहसन "सन्धि-वार्त्ता"; उपसभापति डा० भूषणलाल कौल की कहानी "लम्बरदार जसवन्तसिंह" सुनायी गईं।

तदुपरान्त मुख्य अतिथि श्री तोषखानीजी ने पारितोषिक वितरण किया। पारि-

तोषिक तीन रूपों (पदक, पुस्तकें और प्रमाण-पत्र) में निम्नलिखित विद्यार्थियों को दिए गए :—

(अ) पं० जगन्नाथ तिवारी स्वर्णपदक—वीणाडुल्लू; उत्तरार्द्ध की परीक्षा में सर्वाधिक अंक प्राप्त करने के हेतु।

(ब) पं० जगन्नाथ तिवारी रजतपदक—विजयमोहिनी कौल—पूर्वार्द्ध की परीक्षा में सर्वाधिक अंक प्राप्त करने के हेतु।

(स) निम्नलिखित विद्यार्थियों को परिषद् की बैठकों में उनके द्वारा सुनाई गई उनकी साहित्य-कृतियों तथा परिषद् की पत्रिका "वितस्ता" में छपी उनकी कृतियों के हेतु चाँदी के साहित्य-पदक दिए गए :—

१. श्री अमरनाथ शान्त एम० ए० अनुसंधित्सु
२. कुसुम हण्डू एम० ए० उत्तरार्द्ध
३. सन्तोष गुरखू एम० ए० उत्तरार्द्ध
४. नैनसी दर एम० ए० उत्तरार्द्ध
५. कौशल्या चुल्लू एम० ए० पूर्वार्द्ध
६. प्राणनाथ भट्ट एम० ए० पूर्वार्द्ध

निम्नलिखित विद्यार्थियों को परिषद् के पदाधिकारी नियुक्त होने के हेतु, साहित्य सृजन एवं परिषद् की गतिविधियों में सक्रिय भाग लेने के हेतु प्रमाण-पत्र दिए गए :—

१. कुमारी विजयमोहिनी कौल एम० ए० (उत्तरार्द्ध) मन्त्री
२. कुमारी पुष्पलता दर एम० ए० (पूर्वार्द्ध) उपमन्त्री
३. कुमारी बसन्ती जाला एम० ए० (उत्तरार्द्ध) उपमन्त्री, सांस्कृतिक-कार्यक्रम
४. श्री मोहनलाल दास एम० ए० (पूर्वार्द्ध) कोषाध्यक्ष
५. श्री मोहनलाल बाबू एम० ए० अनुसंधित्सु प्रतिनिधि
६. सन्तोष कुमारी दर एम० ए० (उत्तरार्द्ध) कक्षा प्रतिनिधि
७. फूला मुट्ठ एम० ए० (पूर्वार्द्ध) कक्षा प्रतिनिधि
८. प्राणनाथ भट्ट एम० ए० (पूर्वार्द्ध) कक्षा प्रतिनिधि
९. फूला राज़दान एम० ए० उत्तरार्द्ध कक्षा प्रतिनिधि
१०. सुदेश अरोरा एम० ए० पूर्वार्द्ध कक्षा प्रतिनिधि

समय-समय पर परिषद् की गोष्ठियों में सुनाई गई सर्वश्रेष्ठ कृतियों के लिए निम्नलिखित विद्यार्थियों को पुस्तकें पारितोषिक रूप में प्रदान की गईं :—

१. विजयमोहिनी कौल एम० ए० उत्तरार्द्ध
२. बसन्ती जाला एम० ए० उत्तरार्द्ध
३. बिमला मिसरी एम० ए० उत्तरार्द्ध
४. फूला राजदान एम० ए० उत्तरार्द्ध
५. पुष्पलता दर एम० ए० पूर्वार्द्ध
६. सुभाषिनी कौल एम० ए० पूर्वार्द्ध

७. ननाजी आखून एम० ए० पूर्वार्द्ध
८. गिरिजा रैणा एम० ए० पूर्वार्द्ध
९. ऊषा लंगर एम० ए० पूर्वार्द्ध
१०. मोहनलाल दास एम० ए० पूर्वार्द्ध
११. मनोहर सिंह एम० ए० पूर्वार्द्ध
१२. माखनलाल पीर एम० ए० (पूर्वार्द्ध)
१३. रोशनलाल भट्ट एम० ए० (पूर्वार्द्ध)

निबन्धप्रतियोगिता में प्रथम एवं द्वितीय आने के हेतु निम्नलिखित विद्यार्थियों को पुरस्कार पुस्तकों के रूप में प्रदान किए गये :—

१. कुमारी विजयमोहिनी कौल एम० ए० (उत्तरार्द्ध) प्रथम पुरस्कार
२. फूलाराज़दान एम० ए० (उत्तरार्द्ध) द्वितीय पुरस्कार
३. श्री रोशनलाल भट्ट एम० ए० (पूर्वार्द्ध) प्रथम पुरस्कार
४. पुष्पलता दर एम० ए० (पूर्वार्द्ध) द्वितीय पुरस्कार

इसके पश्चात् मुख्य अतिथि श्री तोषखानीजी का भाषण हुआ। उन्होंने कहा— "अभी तक कई तरफ से यह आवाज़ सुनाई देती है; कि हिन्दी क्यों, हिन्दुस्तानी क्यों, उर्दू क्यों ? परन्तु यह झंझट राजनीतिज्ञों का है। कई एक विद्वान् कहते हैं कि हिन्दी कोई पूर्ण भाषा नहीं है, जो कि हमारे व्यक्तित्व को पूर्णरूपेण प्रकट करने में समर्थ होती हो। कई त्रुटियों की ओर इस विषय में हमारा ध्यान दिलाया गया है। इनमें से एक त्रुटि यह है कि हिन्दी में क्रिया के साथ लिंग का प्रयोग होता है जिससे अहिन्दी भाषियों को काफी कठिनाई होती है। परन्तु यह ऐसी कठिनाई नहीं है जिसे बतला कर हिन्दी को दुत्कारा जाये और उसके स्थान पर किसी विदेशी भाषा को प्रयोग में लाया जाये। जब भाषा के विषय में झगड़े होते हैं तो यह प्राकृतिक बात बन जाती है कि कोई विदेशी भाषा हम पर लादी जाये, परन्तु मेरा निजी विचार है कि ऐसा हो नहीं सकता। हिन्दी आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं का सर्वोत्तम रूप है। परन्तु अब प्रश्न यह उठता है कि हिन्दी का कौन-सा रूप सबसे अच्छा है—हिन्दी, उर्दू या हिन्दुस्तानी। यह बात तो मानी हुई है कि हिन्दुस्तानी, हिन्दी या उर्दू में कोई विशेष अन्तर नहीं है परन्तु जिस समय पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग किया जाता है उस समय कठिनाई अवश्य होती है। इतना होते हुए भी इन भाषाओं में पारस्परिक विरोध नहीं होना चाहिए। सभी के शब्दों को ग्रहण करके ही हम एक ऐसी भाषा निर्मित कर सकते हैं, जिसे सब बड़ी सुगमता से समझने में समर्थ हो सकेंगे और वही राष्ट्र-भाषा कहलायेगी। परन्तु हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि हिन्दी एक जाति की ही नहीं अपितु सभी की है। अन्त में उन्होंने कहा—"हिन्दी क्यों"—? हिन्दी इसलिए कि हिन्दी आते-जाते आती है, चलते-चलते आती है, यहाँ तक कि भारत के एक कोने से दूसरे कोने तक समझी जाती है।

इसके उपरान्त मन्त्री ने मुख्य अतिथि तथा अन्य सभी आमंत्रित सज्जनों के

प्रति अपना आभार प्रकट किया। मंत्री ने अपने सहयोगियों को भी धन्यवाद दिया जिनके सहयोग से वह अपने कार्य में सफल रही।

अन्त में, मैं सभापति डा० रमेशकुमार शर्मा, उपसभापति डा० भूषणलाल कौल, के प्रति अपना आभार प्रकट करती हूँ जिनके पथ-प्रदर्शन के फलस्वरूप परिषद् को अभूतपूर्व सफलता प्राप्त हुई। इसके अतिरिक्त अनुसंधित्सु प्रतिनिधि श्री मोहनलाल बाबू, श्री अमरनाथ शान्त, श्रीमती सन्तोष ककरू तथा कुमारी नीना कौल की भी मैं आभारी हूँ, जिन्होंने समय-समय पर परिषद् के कार्यक्रमों में अपना सद्सहयोग प्रदान किया। मेरे सहयोगियों कुमारी बसन्ती जाला, पुष्पलता दर तथा श्री मोहनलालदास ने अपना जो सहयोग दिया उसके लिए मैं गर्व तथा हर्ष का अनुभव करती हूँ।

मुझे इस बात पर हार्दिक प्रसन्नता होती है कि इस वर्ष साहित्यिक एवं सांस्कृतिक दोनों ही क्षेत्रों में परिषद् को अभूतपूर्व सफलता प्राप्त हुई। मुझे आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि हिन्दी परिषद् इसी भाँति उत्तरोत्तर उन्नति के पथ पर अग्रसर होगी और अगले सत्र के मंत्री को मैं अपना कार्यभार सुचारु एवं सुव्यस्थित रूप से सौंपने में समर्थ होऊँगी।

विजयमोहिनी कौल
मन्त्री
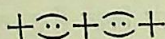
बहुरि बंदि खलजन सत भाएँ। जो बिनु काज दाहिने बाएँ॥
जे पर-दोष लखहिं सहसाखी। परहित घृत जिनके मन माखी॥

गोस्वामी तुलसीदास

● ● ●

दोनों से बचो

नीची नज़र वाले पुरुष तथा ऊँची नज़र वाली स्त्री से।

—अवधी कहावत
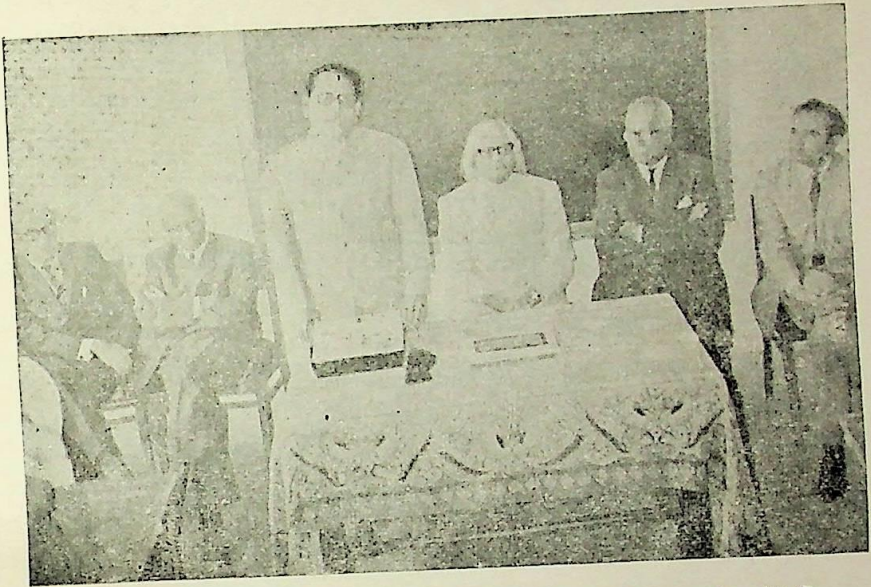
पं० सुमित्रानन्दन पन्त का स्वागत करते हुए डा० रमेशकुमार शर्मा। बैठे हैं, डा० मुहिब्बुलहसन, स्वर्गीय प्रो० सरवरी, पन्तजी, प्रो० बशीरउद्दीन तथा डा० शकीलुर रहमान।

१९६८-६९ की हिन्दी परिषद् की कार्य-कारिणी के सदस्य, उप कुलपति के साथ।

गिरिजा काक
एम० ए० (पूर्वार्द्ध)

**

उफ़ ! यह धूम्रतार।

रुआंसी शाम ने
फिर विकल रागिनी छेड़ दी
उर-नभ में छा गया
घना अंधेरा
नील सरितायें विलीन हो गईं
पीले, हरे, बनफशी अरुण
रंगों का उत्सव भी
पश्चिम में लीन हो गया
सुदूर
विस्तृत नभ के कोने में
झिलमिल-झिलमिल करता
एक सितारा
उफ़ यह धूम्र तारा !
मदमाती उमंगें
अभिशप्त हो गयीं
राह चलते कितने बटोही
रुक-रुक जाते हैं
इसको देखकर,
संत्रस्त सशंकित और विस्मृत
रह जाते हैं।

भीषण भूकम्प से पड़ गई दरारें।
कभी के लहलहाते बेखबर
चीड़, आबनूस, देवदारु
आज क़ब्रों में
ख़ामोश सो जायेंगे
कोयला हो जाने को।
शायद युगों के बाद
सेडिमेण्ट्री चट्टानें बन जाने को
तब मधुबन न उगेगा।
भविष्य भी श्मशान बनेगा।
प्राची उगल रही है आग
काल-व्याल फन फैलाये
उफन रहा झाग
बस्तियाँ वीरान हो गयीं
जनता जलकर राख हो गयी
फिर भी
अभागे दूध पीते प्यारे बच्चे
पिघलते हुए लावे में
यहाँ-वहाँ किलबिल-किलबिल
तड़प रहे हैं।

दिवस में हरित
काली श्यामल अंधियारी रात में
काले दिखाई देने वाले पेड़ों पर
नन्हीं-नन्हीं वर्षा की बूँदें
जब रिमझिम-रिमझिम
सिहर-सिहर गिरती जाती हैं
लगता है अनेक चमकते-दमकते जुगनू
अठखेलियाँ कर रहे हैं।
ऐसे में 'चेतना'
दिवास्वप्नों से

रोज़
छली जाती है
दिन में जले हुए
'पोल' के बल्ब की तरह
खुद ही खुद
शरमाती है सकुचाती है
आँखों के सामने डूब जाता
सारा नज़ारा ।

उफ़ ! यह धूम्र तारा ।
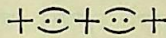
आँसुओं का ताजमहल

१८६२ ई० में, दो वर्ष के वैवाहिक जीवन के बाद अंग्रेज़ी कवि रोज़ेटी की पत्नी का अचानक देहान्त हो गया । अपनी पत्नी को सम्बोधित करके तथा पत्नी के रूप एवं प्रेम से प्रेरित होकर कविताओं की एक छोटी सी पुस्तक की पाण्डुलिपि कवि ने तैयार की थी । प्रिया के अचानक निधन ने रोज़ेटी को तन-मन से तोड़ दिया । शोक-संतप्त कवि ने पत्नी के केशों तथा कपोल के मध्य उस पाण्डुलिपि को अन्तिम भेंट के रूप में रख दिया और वह हाईगेट के कब्रिस्तान में दफना दी गई ।

रोज़ेटी के मित्रों के अनवरत अनुरोध पर सात वर्षों बाद बड़ी अनिच्छा से कवि ने कब्र को पुनः खुलवाया और पाण्डुलिपि निकलवाई गई । अनाम, अप्रसिद्ध कवि रोजेटी अनायास संसार-प्रसिद्ध हो गये, जैसे ही वह छोटी सी कविता पुस्तिका प्रकाशित हुई । कवि के आँसुओं का ताजमहल कविता के रूप में चिर-स्थायी हो गया; संगमरमर के ताज से भी अधिक स्थायी तथा सुन्दर रूप में ।

शीला रैना
एम० ए० (पूर्वार्द्ध)

**

कुहासे का खण्डहर

दो दिन से निरन्तर पानी बरस रहा था। आसमान में बादल इस कदर छाये हुए थे कि दिन में भी बत्तियाँ जलानी पड़ती थीं। रात में तो यह अँधेरा बहुत ही डरावना लगने लगता था। रात के नौ बजे थे और सुभाष जाने की तैयारी कर रहा था। इस समय भी पानी बरस रहा था और हवा डरावनी आवाज करती हुई चल रही थी। बार-बार यह भ्रम हो जाता था कि पास में ही सिसक-सिसक कर कोई रो रहा है। बाहर निकलने के लिए यह समय बिल्कुल ठीक नहीं था और इसीलिए रमा सुभाष से बोली—"क्या किसी बहुत आवश्यक काम से……?" वह अभी अपना वाक्य पूरा भी न कर पाई थी कि बीच में ही टोकते हुए सुभाष ने कहा—"कितनी बार तुमसे कह चुका हूँ रमा कि इस तरह मेरे कामों में दखल न दिया करो। काम ही तो है, तभी जा रहा हूँ।"

"मैंने समझा शायद आप क्लब जा रहे हैं और आज इस वारिश में……"

"हाँ भई! क्लब ही जा रहा हूँ, तो भी क्या हुआ? तुम अगर यह चाहती हो कि स्कूली बच्चे की तरह चार बजे लौटकर मैं घर में बेकार पड़ा रहूँ तो वह मुझसे न होगा,"—क्रोधावेश में सुभाष कहने लगा। "मुझे तो सोसाइटी में रहना है—लोगों के साथ मेलजोल बनाये रखना है। मेरी समझ में यह बात नहीं आती कि मेरे आने-जाने में इस तरह का सन्देह करना और व्यर्थ के प्रश्न पूछने का क्या मतलब है। आखिर तुम चाहती क्या हो?" एक ही साँस में सुभाष सब कुछ कह गया।

रमा जो अभी तक निष्प्राण सी खड़ी अपने पति की ओर देख रही थी अब स्वर को कठोर बनाकर दृढ़ता के साथ बोली—

"यही कि आप किसी कुंआरी लड़की के साथ क्लब जाएँ और लोग आपके नाम पर पीछे न जाने क्या-क्या कहें, मुझसे सुना नहीं जाता। मैं नहीं समझती कि क्लब भी समाज और सभ्यता का एक इतना महत्वपूर्ण अंग बन गया है जहाँ, चाहे जो भी हो, जाना आवश्यक होता है।"

"बस, बस रमा ! बहुत हो चुका यह भाषण ! लेकिन मैं फिर कहता हूँ और हर बार कहूँगा कि इस प्रकार की झिड़की मुझे कायर नहीं बना सकतीं। अच्छा तो मैं चला। रात को देर हुई तो मेरी प्रतीक्षा मत करना।"

सुनकर रमा पर मानो वज्राघात हुआ। उसके अंग-अंग में विद्रोह की भावना उद्दीप्त हुई किन्तु साथ ही किसी अज्ञात आशंका से मन भर आया। वह कोई ऐसा कारण ढूँढ़ निकालना चाहती थी जिससे सुभाष उस मूसलाधार बारिश में बाहर न जाए लेकिन जब उसने उसको गैरेज से गाड़ी निकालते देखा तो उसके हृदय को ठेस पहुँची। मडगार्ड पर रोशनी में पानी की बड़ी-बड़ी बूँदें अजीब सी लग रही थीं। बरामदे में खड़ी रमा जाती हुई गाड़ी को दूर तक देखती रही। इसके बाद वह जल्दी से कमरे में लौट आई। उसने सारे दरवाजे और खिड़कियाँ बन्द कर दीं। कम्बल ओढ़कर वह दो-तीन घंटे तक पलंग पर लेटी रही। अर्द्ध-जागृतावस्था में उसका मन तरह-तरह के विचारों का ताना-बाना बुनने लगा।

× × × ×

कालेज के लॉन में बैठी रमा अपनी सहेलियों की छेड़छाड़ का केन्द्र बनी हुई है। रंगीन कहकहों से सारा वातावरण गूँज रहा है और अपने को इस समस्त उल्लास का केन्द्र-बिन्दु समझकर वह गर्व अनुभव कर रही है—

'अरी रमा ! तुम्हारी वह ननद तो सचमुच हम जैसी चार लड़कियों के बराबर है। इतना तो खैर शुक्र है कि भाई-बहिन एक जैसे नहीं है—कहीं हमारे जीजा साहब भी वैसे ही मोटे होते तो—'

वन्दना के कहे इस वाक्य पर एक बार फिर हंसी के कहकहों से सारा वातावरण गूँज उठा और रमा कुछ-कुछ सकुचाती हुई कृत्रिम क्रोध जतलाकर अपनी सहेलियों को चुप कराने का प्रयत्न करने लगी।

कल ही रमा की मँगनी सेठ बन्सीलाल के इकलौते बेटे सुभाष के साथ हुई थी और इसी शुभावसर की प्रसन्नता में उसकी सहेलियाँ कालेज आकर भी कल के 'एड़वेनचर्स' सुनने और सुनाने में लगी थीं। हँसी-मज़ाक के इन कहकहों में यदि कोई भाग नहीं ले रही थी तो वह पूर्णिमा थी जिसे ये कहकहे हथौड़े की चोट की तरह लग रहे थे। यूँ तो पूनम को रमा की अन्तरंग सहेली कहा जाए तो उचित ही है। दोनों की मित्रता बचपन से चली आ रही थी और कालेज में भी वह पूर्णरूपेण बनी रही थी। साथ-साथ उठना बैठना, पढ़ना—यहाँ तक कि कालेज में उनकी मित्रता एक उदाहरण बन गई थी। अभिन्न मित्रता के लिए कुछ कहना होता तो सभी कहते—'बस रमा पूनम की तरह।'

लेकिन जब से रमा की शादी की बात सुभाष के साथ निश्चित हुई, दोनों सहेलियों में एक खिचा-खिचा सा व्यवहार शुरू हो गया था।

'तुम राजेश के साथ नहीं, स्वयं अपने साथ छलना कर रही हो रमा' —एक दिन पूनम ने रमा से कहा था। 'मेरी समझ में यह बात नहीं आती कि आखिर किसी निर्धन की भावनाओं से खेलने का तुम्हें क्या अधिकार था जब तुम उसको अपनाना नहीं चाहती थीं।'

"यह मेरे अपने बस की बात नहीं है पूनम ! मैं इसमें कुछ नहीं कर सकती हूँ। डैडी की इच्छा में हस्तक्षेप करना तो मैं अपने लिए लज्जा-जनक बात समझती हूँ। इसी घर में पहले जीजी का ब्याह हुआ, भाई-साहब का ब्याह हुआ; उन्होंने जब पिताजी की आज्ञा का उल्लंघन नहीं किया तो मैं कैसे कर सकती हूँ ?" रमा बोली थी।

'लेकिन किसी मासूम हृदय को ठुकराकर तुम्हें शान्ति नहीं मिलेगी रमा ! भूलो मत कि तुमने एकांत घड़ियों में अपने हृदय की धड़कनों को साक्षी बनाकर किसी से वादा किया था और आज अपने दिये हुए वचन से तुम केवल इसीलिए मुँह मोड़ रही हो कि राजेश के पास धन नहीं है। मैं अब भी कहती हूँ रमा कि तुम इस शादी का विरोध करो।'

'पूनम !' रमा क्रोध में चिल्लाई। 'मेरे से यह नहीं हो सकेगा। मैं विवश हूँ।'

× × × ×

वर्षा ज़ोरों की हो रही थी। हवा साँय-साँय करती हुई बह रही थी। हाथ बढ़ाकर रमा ने स्विच दबाया लेकिन आश्चर्य की बात थी कि

बत्ती जली ही नहीं। उसने फिर से स्विच दबाया लेकिन अँधेरा उसी तरह बना रहा। बाहर हो रही हवा की आवाज उसे डरा रही थी। उसका मन पुनः किन्हीं विचारों में उलझ गया।

× × × ×

सुभाष से रमा की शादी हो गई। बहुत चाहने पर भी पूनम इस शादी का विरोध न कर सकी। उसकी समझ में यह बात नहीं आने पाई थी कि रमा इस शादी को कैसे मान गई और फिर आश्चर्य तो यह था कि रमा इस विवाह से प्रसन्न भी थी। उसके हाव-भाव से ऐसा लग रहा था मानो वह पूनम को समझाना चाहती हो कि पूनम, प्रेम ही सब कुछ नहीं है। संसार में जीने के लिए और भी कुछ चाहिए। मान लिया कि राजेश से उसे प्रेम मिल सकता था लेकिन जीवन में उसे किसी दृढ़ सम्बल की आवश्यकता थी जो वह राजेश को नहीं समझती थी। यह आधार उसे सुभाष के रूप में मिल सकता था जिसके घर में धन था, सम्मान था और फिर सुभाष भी तो उसे एक ही बार देखने पर जी जान से चाहने लगा था।

ओह! सोचते-सोचते एक टीस सी रमा के हृदय में उभर आई। "सुभाष भी तो उसे जी-जान से चाहने लगा था"—अपने सोचे हुए इस एक वाक्य का वह विश्लेषण करने लगी।

काश! सचमुच ऐसा होता! वेदना और पीड़ा से उसका हृदय भर आया। भविष्य उसे भंयकर अजगर के समान जीभ निकाले दिखाई दिया। ओह! यह अवश्य ही उसे अपनी विषैली फुफकार से भस्म कर डालेगा। वह इससे दूर भागने का प्रयत्न करने लगी। उसका यथार्थ उसके सम्मुख था—उसकी आकांक्षाओं—उसके स्वप्नों के ठीक विपरीत! वह एक क्षण के लिए इस कुहासे से मुक्त होने के लिए छटपटाने लगी—एक पल के लिए ही अपनी उन मधुर घड़ियों में फिर से विचरण करने की उसे तीव्र उत्कण्ठा हुई किन्तु आह! वह केवल मन मसोस कर रह गई।

'कितना स्नेह! कितना त्याग! छलकता था उस सौम्य मूर्ति में!' रमा सोचने लगी। 'मैं तो तुम्हारे लिए सब कुछ कर सकता हूँ रमा, समाज से जूझ लेने की मुझमें हिम्मत है। तन और मन की जहाँ लगन हो वहाँ कोई बात असम्भव नहीं हो सकती। हाँ! धन का तो अभाव अवश्य है।'

'फिर वही धन! राज! कितनी बार तुमसे कहा कि मेरे सामने यह धन की बात मत कहा करो। मुझे इससे बड़ा दुःख होता है कि······'

'अरे नहीं ! मैं थोड़े ही तुम्हारे विषय में कह रहा हूँ लेकिन यह तो एक सत्य है और तुमको भी जानना चाहिए कि धन एक महत्त्वपूर्ण साधन है जिससे असम्भव से असम्भव कार्य भी सम्भव सिद्ध हो सकते हैं।' बहुत ही गम्भीर होकर राज ने कहा था।

'अच्छा ! सुन चुकी अब। मान लिया कि बहुत ही गूढ़ विचार वाले हो लेकिन यही सब कुछ सुनाने के लिए घर से इतनी दूर यहाँ ले आये थे मुझे ? मुझे दुःख होता है राज ! कि कम-से-कम ऐसी बात तुम्हें मुझसे नहीं कहनी चाहिए। क्या तुम्हें अपनी रमा पर इतना भी विश्वास नहीं……?'

नहीं रमा ! ऐसा मत कहो। मेरे नीरस और उजाड़ उपवन में पहली बार तुम ही आशा की किरण बनकर आई हो और भला तुम्हारे ऊपर ही मैं अविश्वास करूँ। 'र——ा——ज ! चाहे घर वाले मानें या न मानें, मैं तुम्हारी हूँ और सदा तुम्हारी होकर ही रहूँगी।'

× × × ×

सोचते-सोचते रमा एक विचित्र प्रकार के उल्लास से रोमांचित हुई। किन्तु तभी उसे एक ठेस सी पहुँची। उसे लगा कि उसकी आत्मा उसे धिक्कार रही है। ओह ! तो क्या सोचने मात्र का भी अब उसे अधिकार नहीं ! यह ईर्ष्या तो नहीं है। नहीं ! नहीं !! पूनम, मुझे गलत मत समझो। मुझे तुमसे ईर्ष्या नहीं है। मुझे खुशी है कि जिस हीरे को काँच का टुकड़ा समझकर किसी अभागिन ने ठुकराया था उसी को तुमने सहर्ष अपनाया है। वह सोचने लगी—कितना सुखमय जीवन होगा दोनों का ! और एक दीर्घ निःश्वास उसके मुँह से निकल पड़ी। अपने अभाव का आज उसे बहुत अधिक अनुभव हो रहा था। वह सोचने लगी—'काश ! पूनम ! मैंने तुम्हारी बात मान ली होती।—तुमने एक सच्ची सहेली का परिचय दिया था—मेरे डगमगाते कदमों को सम्हालने का प्रयास भी किया था किन्तु तब मैं समझ न पाई ! हृदय और मस्तिष्क के संघर्ष में मस्तिष्क का अनुसरण कर मैं एक गलत राह पर आ गई—जिसे एक दृढ़ आधार वाला भवन समझा था वह केवल खण्डहर था—एक ऐसा खण्डहर जो स्वयं गिरने वाला हो भला वह किसी दूसरे का सहारा कैसे बने ! मैं अपने को बिल्कुल बेसहारा समझ रही हूँ—केवल स्मृतियों का कुहासा खण्डहर पर जमता जा रहा है। आँधी की आशंका से हृदय घिरा हुआ है।' और वह सुबक-सुबक कर रो पड़ी। थोड़ी ही देर बाद उसे गाड़ी के संकेत की

आवाज आई। फिर आठ दस आदमियों की पदचाप सुनाई दी। उसका हृदय भयभीत होकर धड़कने लगा। वह पागल की भाँति द्वार की ओर बढ़ी। उसकी आँखों के आगे अन्धेरा छा गया। उन आदमियों में से रामलाल को पहचाना·······सुभाष का पी० ए०। उसे लगा कि वह चक्कर खाकर गिर पड़ेगी·······लोग जमा हो गये हैं····वह सिर पीट-पीट कर रो रही है। बैड पर सुभाष की लाश रखी हुई है—पूरा शरीर ज़ख्मी हुआ है—और पूनम उसे सान्त्वना दे रही है······

रमा को जब होश आया तो अपने इर्द-गिर्द लोगों की भीड़ को देख कर वह सिहर उठी। वर्षा का उद्‌गार कुछ भी कम नहीं हुआ था। पास बैठी मुहल्ले की स्त्रियाँ सिर नीचा किए विलाप कर रही थी और आँसू बहा रही थी किन्तु रमा की आँखें शुष्क थीं—उसके सारे आँसू जैसे सूख चुके थे। उसके कानों में यह वाक्य बार-बार गूंज रहा था—'साहब स्वयं गाड़ी ड्राइव कर रहे थे·······बहुत ज्यादा पी ली थी····गाड़ी एक खाई में लुढ़क गई······उनके साथ जो स्टेनो थी वह ज़ख्मी होकर अस्पताल में है······।'

इसके अतिरिक्त रमा कुछ और सोच नहीं सकी। कुहासे का खण्डहर अब पूर्ण-रूप से नष्ट होकर मिट्‌टी में मिल गया था और वह फटी-फटी आँखों से छत की ओर ताकती रह गई।

+○+○+
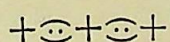
पूतना ने कृष्ण को विष पिलाना चाहा। कृष्ण ने विष के साथ पूतना के प्राण भी पीलिए। पापी अपने पाप के साथ स्वयं ही नष्ट हो जाता है।

—सम्पादक

● ● ●

गुरु बिरह चिनगारी मेला जोसुलगाइ लेइ सो चेला

—जायसी

कौशल्या चल्लू
एम० ए० (उत्तरार्द्ध)
मंत्री, हिन्दी-परिषद्

**

'रेगिस्तानी चेतना'

कल रात अपनी
चेतना का
'लॉक आउट' करके हम
बाहर निकले
चाबी एक चिर-परिचित
गुमनाम कोने में
फेंक दी
ताकि आवश्यकता पड़ने पर
फेंकी हुई चाभी को
खोजने में देर लगे
और हमें
भटकने का
कुछ और समय मिले।
वर्षों से
पुरानी फाइलों में सड़ती आत्मा को
झाड़-पोंछ कर
हम उस पर
'रिसर्च' करने बैठे
और
पन्ने उलटते पुलटते

खुद भी पुराना 'अनपेड बिल' बन कर
उसमें 'आल्पिन' से
बिध कर रह गए।
तपते हुए वृक्षों की
तिलमिलाती छाया में
मन भर विश्राम करके
झनझनाता, सिहरता बदन लेकर
हम लौटे तो
राह चलते
किसी ने कहा कि,
जहां हम हरियाली समझ कर
पिकनिक मनाने गए थे,
वह मरुस्थल था
कोई 'पार्क' नहीं।
तब हमने
अपने शरीर पर
दृष्टि डाली; तो वहां
असंख्यों छोटे बड़े ज़हर-भरे छाले
अपनी वीभत्स आँखों से
हम पर हँस रहे थे
और
हमारे अज्ञान की मासूमियत को
अपने रिसते लहू की बूँदों से
थपथपा रहे थे।
भावनाओं का चढ़ता सूर्य
बीच आकाश में जाकर अटक गया—
और, हमारे देखते देखते
किसी नामालूम
शक्ति द्वारा
'किडनेप' कर लिया गया।
घिनौनी आस्थाओं के,

निर्लज्ज कहे जाने वाले चकले के बीच
हम घूमते हुए निकले, परन्तु—
चूँकि हम ठहरे,
लाज-शर्म के पुतले,
हमने आँखों पर
नायलोन नेट की
परत चढ़ा ली।
झिर-झिरे कपड़े के पोर-पोर
के बीच से झाँक कर
हम चकले का
दृश्य देख-देख कर
आनन्दित होते रहे; फिर—
मुँह बना कर
(पीछे मुड़-मुड़ कर देखते हुए)
थू-थू करते हुए
हम घर को चल दिए।
—जहाँ से हम भागे थे!

+⌣+⌣+
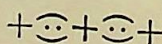
शेख नबी : जनाब, मुझे दो दिन की छुट्टी चाहिए। मेरी बीबी चाहती है कि मैं मकान की झड़ाई-पुताई इसी महीने खत्म कर दूँ।

आग़ा साहब : म्याँ, तुम्हारी बीबी का शिकायती-ख़त मेरे पास आया है। लिखती हैं, तुम फ़ज़ूलखर्च हो, और घर के काम में मदद नहीं करते हो, तुम्हें छुट्टी कैसे दे सकता हूँ?

शेख नबी : बेहतर जनाब! (दफ्तर के दरवाजे पर रुक कर) जनाब, इस दफ्तर में दो झूठे आदमी हैं उनमें से एक मैं हूँ। मेरी अभी शादी ही नहीं हुई है। आदाबर्ज़।

विजयमोहिनी कौल
एम० ए० (अनुसंधित्सु)

'विष्णु प्रताप रामायण' में प्रकृति चित्रण

**

रामकथा के बीज हमें बहुत प्राचीन काल से प्रणीत साहित्य में मिलते हैं। समय की बदलती गति के साथ-साथ विभिन्न लेखकों ने उन बीज रूपों को कथा का बाना पहनाकर विकसित करने में योग दिया। वाल्मीकि रामायण में ही इस पावन पुनीत कथा का एक विकसित एवं परिवर्द्धित रूप हमें मिलता है जिसे बाद में तुलसीदासजी ने अपनी अमूल्य कृति—"रामचरितमानस" में और सुगठित एवं प्रांजल रूप प्रदान किया। विषय चाहे एक हो, परन्तु विभिन्न लेखकों द्वारा उसकी अभिव्यक्ति में बहुत ही अन्तर रहता है। यही कारण है कि राम-कथा के प्रचलित आख्यान में भावों एवं भाषा की दृष्टि से ही नहीं, कथा की दृष्टि से भी काफी अन्तर आ गया है। प्रस्तुत रामायण लगभग तीन सहस्र चरणों में वर्णित महाकाव्य है। इसके कथाक्रम का मुख्याधार वाल्मीकि रामायण है, जिसमें कवि ने अपनी चिन्तना के फलस्वरूप विभिन्न मौलिक प्रसंगों का चित्रण एवं कुछ नवीन उद्भावनाएँ भी की हैं। प्रस्तुत रामायण के प्रणेता व्योस नामक ग्राम के निवासी श्री विशम्भर नाथ कौल हैं। अधिकतर लोग इन्हें पंडित विष्णु कौल के नाम से ही जानते थे। कश्मीर के तत्कालीन धर्म-प्रिय डोगरा शासक महाराजा प्रतापसिंह कवियों, विद्वानों एवं ज्योतिष-पण्डितों के आदर एवं सम्मान के लिए प्रसिद्ध रहे हैं। पण्डितजी पर उन का विशेष स्नेह था और इसीलिए उन्होंने अपनी यह प्रौढतम रचना उन्हें सश्रद्धा सर्मपित करके इसका नाम "विष्णु प्रताप रामायण" रखा है। अपनी इस कृति द्वारा पण्डितजी कदापि काव्योत्कर्ष न दिखाना चाहते थे। वह भक्त पहले थे और बाद में कवि। लिखते-लिखते कभी वे भक्तिरस में

इतने मग्न हो जाते थे कि उन्हें चेत ही नहीं रहता था कि वह क्या लिख रहे हैं, और वह कुछ और ही लिख बैठते । इस विषय में आज़ाद साहब लिखते हैं,[१]—"हासिलकलाम यह है कि पण्डित साहब की शायरी मज़हबी है, जिसका लाज़िम नतीजा ये है कि अक्सर औकात वे शायरी से दूर जा पड़ते हैं, लेकिन अमूमियत और सलासत उनके यहाँ बहुत शाज़ नजर आती है।" परन्तु इतना सब होते हुए भी उनकी इस कृति में स्वतः ही ऐसा प्रवाह, ऐसी गति, और ऐसी विशेषताएँ आ गई हैं, जो अपने में अद्वितीय हैं, बेजोड़ हैं ।

प्रकृति और काव्य का निकटस्थ सम्बन्ध सर्वमान्य है। काव्य की मूल-चेतना प्रकृतिमयी है । यही कारण है कि काव्य में प्रकृति का सन्निवेश विभिन्न रूपों में होता रहा है। प्राकृतिक उपकरणों के माध्यम से ही कवि मनोहारी रूप में सूक्ष्म से सूक्ष्म भावों को अभिव्यक्त करने में सफल रहता है। प्रायः सभी श्रेष्ठ कवियों ने अपनी भावाभिव्यक्ति के लिये प्रकृति का किसी न किसी रूप में सहारा लिया है ।

प्रस्तुत कृति में हमें प्रकृति-विषयक ऐसे सौन्दर्य पूर्ण चित्र मिलते हैं, जिससे कवि की प्रकृति पर्यवेक्षण एवं चित्रण कला की आपार क्षमता का यथेष्ट परिचय मिलता है। प्रकृति को उन्होंने विभिन्न रूपों में देखा और चित्रित किया है । रामायण में अधिकांश स्थल प्रकृति की सौन्दर्यमयी छटा के प्रतिरूप बनकर उपस्थित हुए हैं । आलम्बन स्वरूप प्रकृति का सुन्दर एवं सजीव चित्रण कवि ने जनकपुर के वसन्तकालीन प्राकृतिक सौन्दर्य के अन्तर्गत इस प्रकार किया है :—

बहारस नव बहारस ताज़ तर बेल
गुलाबस सब्जज़ारस सअथ्य रुत मेल
यम्बरज़ल प्यालअ हयथ गुलिआनरस
हवादारी छि मट्टि बरगे चिनारस
खुशी सर्वन त शमशादन छि बासान
चन्दन कुल्य देवदारन सीअथ हमशान
तरातर अमृतुक ज़ल जायक दार
बहरसो आबि ज़मज़म खास फव्वार

---

१. कश्मीरी ज़बान और शायरी, लेखक श्री अब्दुल अहद आज़ाद, पृष्ठ, ४१२ भाग २ ।

स्यठा नदियन तॅ नहरन हंज नज़ाकत
हियै पोशन त अछि पोशन तराफत
मुअतर आरवल मसवल मुशिकदार
स्थावरजंगमस प्रथ तरफ गुलजार ।[1]

"नव वसंत की मधुर आभा ! गुलाब और स्वच्छ हरियाली की समन्वित शोभा विलसित है । "नर्गिस" मानो "गुलिअनार" के समक्ष मदिरा का प्याला लेकर खड़ी है । चिनार के पत्ते पंखा झुला रहे हैं । "सर्ववृक्ष" और "शमशाद" की निगाहों में हर्षोल्लास दीप्त है । चन्दन और देवदारु पास-पास खड़े हैं । चारों ओर ताज़ा अमृत सरीखा जल फव्वारों से प्रवाहित है । नदी-नहरों के सौंदर्य की तो बात ही क्या ? "हिय" और "अछिपोश" पूर्णरूपेण प्रफुल्लित हैं । "आरबल" तथा "मसवल" की मनमोहक महक इत्र के सदृश चारों ओर फैली हुई है । जड़ और चेतन सभी में वसन्त की मधुर आभा प्रस्फुटित हो रही है ।

अयोध्यापुरी का आलम्बनगत प्राकृतिक दृश्य-वर्णन अत्यन्त सुन्दर बन पड़ा है :—

इन्द्रलोकस सोअन्दर कम पोश बागिअ
वुजान तअति अमृतस हिइव कीअति नागिअ
सरन पम्पोश फोलिमअति जाय जाये
परम ब्रह्मस करान आराधनाये
सोअन्दर गन्धर्व हिइव बोलान पंखी
वुछान जंगल ब जंगल तिअम असंखी
कुल्यन हिंअद बरग जन गजगाह त चामर
करान प्रथ तरफ श्री रामस बराबर[2] ।

"इन्द्रलोक रूपी अयोध्यापुरी में मनमोहक पुष्प वाटिकाएँ हैं । वहाँ के कितने ही चश्मे अमृत सदृश जल से आपूरित हैं । सौन्दर्यमय गन्धर्वों की संगीतमय तानों की तरह वहाँ के पक्षी बोलते हैं । प्रत्येक वन-कानन में असंख्यों ही ऐसे पक्षी विचरण करते रहते हैं । हर तरफ से वृक्ष अपने पत्ते रूप चवँर श्री रामजी को ढुलाते हुए से प्रतीत होते हैं ।"

---

१. विष्णु प्रताप रामायण श्री० ह०, पृ० ६८ ।
२. विष्णु प्रताप रामायण श्री० ह०, पृ० ३४ ।

आलम्बन स्वरूप प्रकृति-चित्रण रामायण में दंडकवन के प्राकृतिक सौन्दर्य वर्णन के अन्तर्गत कवि ने अपार कौशल से इस प्रकार चित्रित किया है—

दंडक वनसीअ अन्दर कम बाग तअ राग
थवान इन्द्रलोकस तिअम बरजिगर दाग
मुअतर सब्जजारन ताज मखमल
न बातो कंद हिइव बागन अन्दर फल
फलन फूलन अंदर बरजसत बुसतां
गुलिस्ताना अजायब सोये नयीस्तां[१]

—"दंडक वन विभिन्न प्रेमापूरित पुष्प वाटिकाओं से सुशोभित है। ये पुष्प वाटिकायें इन्द्रलोक के लिए दाग के सदृश हैं अर्थात् इन्द्रलोक की आभा उनके आगे मलिन पड़ जाती है। मखमली ताज के सदृश, इत्र सी सुगंधि विकीर्ण करते वहाँ के हरियाली से पूरित बागों में खिले फल फूल कंद के समान रसपूर्ण तथा स्वादिष्ट हैं। फल, फूल पूर्णरूपेण विकसित होकर मुस्करा रहे हैं, उनकी शोभा अवर्णनीय है।"

अलंकरण रूप में प्रकृति चित्रण का अत्यन्त उत्कष्ट रूप हमें इस रामायण में मिलता है। राम और सीता के रूप-सौन्दर्य वर्णन में कवि ने प्रादेशिक पुष्पलताओं से ही उपमान ढूंढे हैं। कवि को प्राकृतिक उपमानों के चयन एवं प्रयोग में अद्भुत सफलता मिली है। एक ही प्रसंग में विशिष्ट उपमेय के लिए एक साथ कई उपमानों का सकुशल प्रयोग उक्त रामायण की काव्य-शैली की एक प्रमुख विशेषता है। कवि ने राम के लिए अधिकतर "सूर्य", "कमल", "सोम्बुल" और सीता के लिए "चन्द्रमा", "गुलाब", "मसवल", नर्गिस, तथा रावण के लिए "राहु", "केतु", "ग्रहण", आदि प्राकृतिक प्रतीक प्रयुक्त किये हैं।

सीताजी का रूप-वर्णन अति ही सुन्दर, कोमल एवं कमनीय रूप में चित्रित हुआ है—

जनक राजस छ निरमल अख कुमाईरी
ईवान छि दरशनस नित दीव सअईरी

---

१. विष्णु प्रताप रामायण श्री० ह०, पृ० ४३।

ज्ञानिव दीप्त त्रेअन लूकून अंदर चाँद
गछान तारामंडल तसकुन वुछित मांद
नटान र्तासदिस मुखस यानि सिरिय डेशान
खटान वुअथ चंद्रमअ क्या वुअट छ फेशान।

"महाराजा जनक की एक अत्यन्त सुन्दर एवं कमनीय कन्या है जिस के दर्शन हेतु नित्य प्रति देवतागण आते हैं। वह तीनों लोकों में पूर्णिमा के शुभचन्द्र के समान कान्तिपूर्ण है। उसकी शुभ्रकान्ति से सम्पूर्ण तारामंडल फीका पड़ जाता है। सूर्य उसके मुख की एक झलक देखकर ही थरथर काँपने लगता है तथा चन्द्रमा उसके अपार सौन्दर्य के आगे न टिक सकने के कारण लज्जित होकर मुँह छुपा लेता है।"[1]

प्रकृति पर मानवीय भावनाओं का आरोप तथा पात्रों के सुख-दुःख के साथ प्रकृति के समरस होने का वर्णन भारतीय साहित्य की आदिम प्रवृत्ति है। प्रस्तुत रामायण में ऐसे कई स्थल मिलते हैं जिनमें कवि ने प्रकृति की संवेदना का अद्‌भुत एवं प्रभावात्मक चित्रण किया है। सीताहरण के समय सीता के दुख में आकाश के तारे और पशु-पक्षी संवेदना प्रकट करके दुःख विह्वल हो उठते हैं। राम और लक्ष्मण सीता को वन-वन खोजते हुए प्रकृति को दुःख विह्वल पाते हैं :—

कुकिल च़जमच़ पंजर त्राविथ गमचहअर
वरज वावस अंदर तोतन चि हज्य कअर
न कुनि कस्तूर न कुनि पोशिनूलइ
हरिथ प्योमुत बहर सो फलत फूलइ
दजिथ गामित कुल्यन हँदि मूल सअरि
तिमौ वैरागचइ करमच़ तैयारी
वदान भुतराथ कुअलि कअटि कअनि त आकाश
स्थावर - जंगमस छ गोमुत जअन नाश
वदान कुटिया वदान सामान हन हन
मअशिथ आब्रह्म परियनतस छु खअनवन[2]।

"कोयल और मैना पिंजड़ा खाली छोड़कर भाग गई हैं। विरह-वेदना

---

१. विष्णु प्रताप रामायण श्री० ह०, पृ० ६६।
२. वही, पृ० १७६।

से तोते गर्दन झुकाए पड़े हैं। नित्य गाने वाले "कस्तूर" और "पोशिनूल" कहीं भी दिखाई नहीं दे रहे हैं तथा फल फूल सब मुरझा कर झड़े पड़े हैं, वृक्षों की जड़ें तक जल गई हैं, जैसे समस्त प्रकृति ने वैराग्य धारण करने की ठान ली हो। पृथ्वी, आकाश, पेड़-पौधे सभी रो रहे हैं, ऐसा लगता है मानो सम्पूर्ण सृष्टि (जड़ और चेतन) इस अपार दुःख से नष्ट भ्रष्ट हो जायेंगे। सीता के विरह में कुटिया और कुटिया का सम्पूर्ण सामान रो रहा है। ब्रह्मा से लेकर चींटी तक सभी खाना-पीना भूल गये हैं।

सीता हरण के समय सीता का करुण रुदन एवं प्रलाप सुनकर समस्त प्रकृति शोकमग्न हो जाती है :—

वदान सीता वदान आकाश पाताल
नतै त्रैलूकी आमुत छु भूँचाल
हरान ओश दारि जानावार बराबर
परान सारिअ हरे श्रीराम रघुवर[1]।

"सीता रो रही हैं, उनके साथ-साथ आकाश-पृथ्वी दोनों रो रहे हैं। जैसे तीनों लोकों में भयंकर भूकम्प आ गया हो। समस्त पशु-पक्षी "श्रीराम रघुवीर" का नाम ले ले कर नेत्रों से अश्रुओं की वर्षा कर रहे हैं।"

सीताजी को राम के विरह में निरन्तर दग्ध एवं अश्रुवर्षा करते देख रावण की सुन्दर अशोकवाटिका कुम्हला जाती है, उसमें पतझड़ का पीलापन छा जाता है। वह भी सती सीता के दुःख में साझीदार हो जाती है। इसका चित्र कवि ने इस प्रकार चित्रित किया है :—

बहारस सब्जजारस ढोठ वोलुन
खुशी हुयंद बयोल तथलंकाय गोलुन
कुंअगुक हुइव रंग सोंपुन गुलिअनारन
वंसिथ पेई तार साजन तय सितारन
कुकिलिअ गू गू करान चजि बागअ निश दूर
सती हुंअद मोअख वुछिथ पानस मोलुख सूर
हरिथ पेई गुल त फुल सअरि बराबर
रटिख जरदि हरूद यलि गव तथ अन्दर

---

१. विष्णु प्रताप रामायण, बन० २८।

दरख्तो वोल तुयथुइ वैरक्त रक्तिइ
फना सोंपुन बहारुक ताज तखतिइ
सिरिय अिप दिथ मेघस अंदर बयूठ
पनिम चंद्रमसिइ उपवास तअिमि ड्यूठ[1]

"सीताजी को विरहाग्नि में तप्त देख हरियाली से आपूरित अशोक-वाटिका पर ओलों की वृष्टि होने लगी। लंका में छाई प्रसन्नता समूल उखड़ गई। अरुण गुलअनारों का रंग पीला पड़ने लगा, साज़ों और सितारों के तार टूटने लगे। कोयलों का समूह बैरागी बन, दुःख की ध्वनि करता उस उपवन से भाग गया। सारे फल-फूल झड़ गये और जो भी कुछ बचे फल-फूल थे उनमें पतझड़ का पीलापन छा गया, वे कुम्हलाने लगे। दरख्तों ने वैराग्य धारण कर लिया अर्थात् उनकी आभा धूमिल हो गई। वसन्त की सारी आभा, सारा सौन्दर्य क्षण में नष्टभ्रष्ट हो गया। सूर्य घने काले मेघों में छुप गया, पूर्णिमा के चन्द्रमा ने उपवास धारण कर लिया, उसकी कान्ति मलिन पड़ गई।"

प्रकृति का जीवन के साथ सामंजस्य स्थापित करने में कवि के अपार कौशल के दर्शन सर्वत्र होते हैं। मानव-जीवन और प्रकृति के घनिष्ठ-तर एवं शाश्वत सम्बन्धों का चित्रांकन उक्त कृति में अत्यन्त विशदता के साथ हुआ है। कश्मीरी फूलों, फलों, लताओं, वृक्षों, आदि का स्वतंत्र तथा प्रतीकात्मक रूप-चित्रण अत्यन्त मोहक एवं सजीव बन पड़ा है। कुल मिलाकर प्रस्तुत रामायण में प्रकृति का प्रवाह सरल, स्वाभाविक और मधुर गति से चलता है। अन्त में डा० ओंकारनाथ कौल के शब्दों में—"प्रकाश रामायण के बाद विष्णु प्रताप रामायण में ही वस्तु विन्यास एवं काव्य शैली में क्षेत्रीयता, साहित्यिक, सामाजिक और प्राकृतिक विशेषताओं का अधिक समावेश हुआ है। जन जीवन और समाज का जितना स्वच्छ, सजीव और जीवन्त चित्रण दोनों कृतियों द्वारा सम्भव हो सका है, अन्य काव्यों के माध्यम से नहीं। इस दृष्टि से इन दोनों रामायणों का अपना विशिष्ट महत्व है।"[2]

+◌+◌+

---

१. विष्णु प्रताप रामायण बन०, पृ० ३५।
२. 'कश्मीरी राम-कथा काव्य' प्रबन्ध से उद्धृत।

शामा सेठी
भू० पू० कोषाध्यक्ष, हिन्दी-परिषद

भूल

**

मेरी खुशी आँसुओं की तिजारत है,
मेरी जिन्दगी मौत की इबादत है।
मैंने जिन्दगी के रिश्तों का कर्ज़
अपनी रूह को जला कर भरा है।

मेरी हर बात आहों की अनबोली कहानी है
मेरी हँसी बुरे दिनों की निशानी है
मैं वह टूटा हुआ ख्वाब हूँ ख़यालों का
जो कभी चिनार के महबूब सायों में पला था।

फर्ज़ के तकाज़ों ने मुझको लूटा है
फरिश्तों ने खुद ही मुझे ग़म के मयखाने में भेजा है।
मैं ख़ुद अपने कन्धे पे अपनी लाश हूँ,
अपनी खुशियों के जनाज़े की आखिरी आवाज़ हूँ।
(अपनी ज़ीस्त में यही तो इक मज़लूम भूल हुई है)

मैंने अपनी ज़िन्दगी पर हक अपना समझा था
पर मुझे किसी ने किसी के लिए लुटा दिया।
और अब मैं वह दर्द भरा एक गीत हूँ,
जो न कोई गाता है, न कोई सुनता है।

+·:·+·:·+

डॉ० भूषणलाल कौल
प्राध्यापक हिन्दी विभाग
कश्मीर विश्वविद्यालय

**

कश्मीरी भाषा में दार्शनिक एवम् आध्यात्मिक काव्य

(रहस्यवादी काव्य प्रवृत्ति)

कश्मीरी काव्य का उपलब्ध प्राचीन रूप स्वस्थ एवं उच्चकोटि की दार्शनिक विचार-धारा से ओतप्रोत है। साहित्य में इन भावनाओं को लाने का श्रेय सर्व प्रथम श्री शितिकण्ठ को है, जिन्होंने १३ वीं० शताब्दी में "महा-नय प्रकाश" लिखा। इस विचार-धारा को आगे ले जाने में ललद्यद एवं शेख नूरूद्दीन का विशेष योगदान रहा है। इस रहस्यवादी काव्य-धारा में कई दार्शनिक सिद्धान्तों का सम्मिश्रण मिलता है। शैवमत, ब्रह्मवाद, अद्वैत-वाद्, सूफी-मत एवं गीता के निष्काम कर्मयोग के सदोपदेश को इन सन्त कवियों ने अपने काव्य में स्थान दिया। कश्मीर का शैव दर्शन "त्रिकदर्शन" या "त्रिक सिद्धान्त" के नाम से भी प्रसिद्ध है और १२वीं शताब्दी के अन्त तक, अर्थात् हिन्दू राज्यकाल में, इस दर्शन ने कश्मीरियों के जीवन में एक महत्वपूर्ण स्थान ग्रहण किया था। इस मत की व्याख्या यहाँ के संस्कृत विद्वानों ने अपने ग्रन्थों में विशद् रूप से की है जिन में अभिनवगुप्त का 'तंत्रालोक' उल्लेखनीय है। यह दर्शन प्रधानतः तीन तत्त्वों पर आधारित है—शिव तत्व्, शक्ति तत्व और नर तत्व। वेदान्तियों के कथनानुसार जिसे "ब्रह्म" कहा जाता है, शैवमत वालों ने उसे ही "शिव" की संज्ञा दी है।

कश्मीरी साहित्य के दार्शनिक एवं आध्यात्मिक काव्य का विवेचन करते समय सर्वप्रथम हमारा ध्यान ललद्यद की ओर आकृष्ट होता है। "महानय-प्रकाश" के विषय में अभी भी स्थिति भ्रम-पूर्ण है यद्यपि प्रमुख रूप से उसका विषय त्रिक-सिद्धान्त ही है। लल्लेश्वरी कश्मीरी-साहित्य की

प्रथम प्रसिद्ध कवयित्री हैं जिन्होंने अपनी काव्य-वाणी से १४वीं शताब्दी में जन-मानस को आप्लावित किया। उन्होंने पहली बार अपने "वाख्यों" में तत्कालीन सामाजिक धार्मिक, एवं दार्शनिक भावनाओं का समावेश किया। हिन्दू और मुसलमान दोनों उनका समान रूप से आदर करते थे। वे सदा ईश्वर भजन में ही लीन रहती थीं। उन्होंने बहुत ही सुन्दर तथा गम्भीर "वाख" कहे हैं जो कि "ललवाक्य" के नाम से प्रसिद्ध हैं। अपनी विद्वत्ता के कारण उन्होंने संसार के श्रेष्ठ ज्ञानियों में अपना स्थान बना लिया है। उच्चकोटि की विदुषी होने के साथ-साथ उन्हें जीवन का बड़ा ही कटु अनुभव था। बिषाद-ग्रस्त परिस्थितियों से विवश होकर वे ऐसे जीवन से पलायन चाहती थीं।

ललेश्वरी के काव्य में शिव परमतत्त्व है, जिसको उन्होंने निर्गुण निराकार माना है। शिव ही सर्वत्र व्याप्त है और शिव ही सर्वस्व है :—

—"शिव, प्रत्येक अणु में व्याप्त है। हिन्दू एवं मुसलमान का भेद-भाव भूल कर उसकी शरण में जाओ, यदि बुद्धिमान हो तो मेरी बात समझ लो। यही वास्तव में ईश्वर की पहचान है।"[२]

अज्ञानवश जीव स्वयं अपने अपको नहीं पहचान पाता है। भौतिक सुख उसे सदा अन्धकार में डाल देते हैं और वास्तविकता से वह अनभिज्ञ रहता है। स्वयं अपने आपको वह पहिचान नहीं पाता, परिणामस्वरूप वह जगत् की वास्तविकता एवं जीवन-लक्ष्य से कोसों दूर रहता है :—

"कौन मरेगा, किस को मारेंगे, कोन मारेगा और कौन मारा जाएगा? जो शिव को छोड़ कर जगत् के दाव-पेंच में फँस जाएगा, वही मरेगा और उसी को मारेंगे।[३]

परमतत्त्व में लीन होने के लिए गुरु-उपदेश आवश्यक है। स्वयं ललद्यद ने भी सयिदबोयुई से गुरू शिक्षा ली थी। गुरू ही वास्तविक अर्थों में पथ-प्रदर्शक है। सूफी मत में भी गुरू के महत्व को स्वीकार किया गया है। अतः ललेश्वरी कहती है :—

"मेरे गुरू ने मुझे केवल एक ही उपदेश दिया—संसार के मोह-बन्धन को छोड़ कर आतमा को पहचानना। इसी कथन को मैंने अपने लिए उपदेश समझा और इस कारण में निर्वसन नाचने लगी।"[४]

ललेश्वरी योगाभ्यास में सिद्ध थीं। आतम-ज्ञान की प्राप्त के हेतु वे नित्य योग-साधना में रत रहती थीं। योग के दुष्कर मार्गों से चलकर उन्होंने

परमज्योति का साक्षात्कार किया था। मिथ्या 'कपट', असत्य एवं राग-द्वेष से वह मुक्ति थीं। उन्होंने दर्शन के सिद्धान्तों का व्यवाहारिक रूप से पालन किया है—

—"मैंने मिथ्या, कपट एवं असत्य को छोड़ दिया और अपने मन को उपदेश कर तद्नुकूल बनाया। मुझे प्रत्येक जीव के भीतर वही परमज्योति दिखाई दी अतः खान-पान में कैसा परहेज़।"[५]

उसे सारा संसार ही शिवमय प्रतीत हो रहा है अतः क्या पूजन क्या अर्चन रे।

वास्तव में धार्मिक अन्धविश्वास, रूढ़ परम्पराओं एवं मूर्ति-पूजा के विरुद्ध लल्लेश्वरी आत्म-शुद्धि पर अधिक बल देती हैं :—

—"तुम ही आकाश हो, तुम ही पृथ्वी हो, तुम ही दिन, रात एवं वायु हो। पूजा के लिए चढ़ाने का अनाज, जल, फूल सब कुछ तुम ही हो। तुम ही सर्वत्र हो, अब मैं तुम्हें क्या अर्पण करूँ। बड़ी विचित्र दशा है।"[६]

योगाभ्यास में अनेकों कठिनाइयों को सहकर काँच रूपी शरीर कंचन बन जाता है। सहन-शीलता एवं सन्तोष मनुष्य के चरित्र को दृढ़, पवित्र एवं स्वच्छ बना देते हैं :—

—"बिजलियाँ कड़कती हैं, मनुष्य को सब कुछ सहन करना है। चाहे मध्याह्न हो या अन्धेरा हो इस सब को सहन करना है। सहनशीलता का अभिप्रायः है अपने आपको चक्की के दो पाटों में चुपचाप पीस डालना। यदि तुम में सन्तोष है तो वह स्वयं मिल जाएगा।"[७]

लल्लेश्वरी ने सब से अधिक अद्वैतवाद पर ज़ोर दिया। वे मूढ़ जनता के प्रति उदासीन हैं जो ज्ञान से अनभिज्ञ है और जो सांसारिक बन्धन में एवं माया जाल में फँसी हुई है। उसे उपदेश देना व्यर्थ है। कवयित्री कलात्मक ढंग से इस तथ्य को जनता तक पहुँचाती है :—

"मूर्ख से ज्ञान की बातें नहीं कहनी चाहिये। गधे को गुड़ खिलाने से अपना ही अमूल्य समय नष्ट होगा। रेतीली भूमि में बीज बोना व्यर्थ है और भूसे की रोटियों पर तेल लगाना भी व्यर्थ है।"[८]

गीता पर उन्हें परम विश्वास था। गीता के निष्काम कर्म-योग को वे व्यावहारिक रूप में देखना चाहती थीं। ढोंग रचाने के लिए पण्डित

एवं तथाकथित विद्वान् गीता पाठ करते हैं परन्तु वास्तविकता से सभी अपरिचित हैं :—

—"व्यभिचारी लोग पुस्तकें पढ़ते हैं, पोथियों का पाठ करते हैं, जैसे तोता पिंजरे में राम नाम की माला जपता है। दिखाने के लिए गीता का पाठ करते हैं। मैंने गीता पढ़ी है और उसके उपदेश दैनिक जीवन में प्रयोग में लाती हूँ।"[९]

पण्डितों के कृत्रिम जीवन से उसे घृणा है अतः रुष्ट होकर कहती हैं :—

—"उपदेशक ! तू जनता को सन्मार्ग पर चलने का नित उपदेश देता है। लेकिन स्वयं तुझ पर उसका कुछ प्रभाव नहीं पड़ता, जिस प्रकार कसाई मांस बेचता है परन्तु स्वयं उसके पास खाने के लिए सिर या कान भी नहीं रहते।"[१०]

यह बात निर्विवाद रूप से सिद्ध है कि हिन्दी साहित्य में कबीर दास ने जिस निर्गुण काव्य-धारा का नेतृत्व किया एवं मलिक मुहम्मद जायसी ने जिस सूफी सिद्धान्त का समावेश हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्य परम्परा में किया, उन दोनों सिद्धान्तों का सम्मिश्रित रूप पहले ही कश्मीर के सन्त काव्य में मिलता है।

इसी युग में कश्मीर में एक प्रसिद्ध सन्त शेख नूरुद्दीन हुए हैं। इन्हें "नुन्दर्योश" भी कहा जाता है। "ऋषिनामा" इनके जीवन और काव्य के विषय में प्रामाणिक ग्रन्थ माना जाता है। इन्हें हम ललद्यद की शिष्य परम्परा में ले सकते हैं। बचपन में ही इनका विवाह हुआ था। परन्तु गार्हस्थ जीवन में निराश होकर वे एकान्त गुफा में ईश्वर साधना में लीन रहे और समय-समय पर दार्शनिक विचारों से ओतप्रोत रचनाएँ करते रहे जो बाद में 'श्लोक' कहलाए। नुन्दर्योश के श्लोकों में जनता के लिए आध्यात्मिक सन्देश निहित है। जीवन की सरलता एवं पवित्रता पर उन्होंने बल दिया है। मानव-प्रेम को श्रेष्ठता प्रदान की है। बाह्याडम्बर एवं पाखण्ड उनके लिए असहनीय था। संसार से विमुख होकर वे उस एक सत्ता में विलीन होने के लिए साधना करने लगे। अपने जीवनकाल में वे अनेक सूफी सन्तों एवं कवियों के सम्पर्क में आए अतः उनकी काव्य-वाणी पर सूफी मत की स्पष्ट छाप पड़ी। वे एक समन्वयकारी सन्त थे जिन्होंने धार्मिक सहिष्णुता एवं चारित्रिक पवित्रता पर अधिक बल दिया है। सूफी

सन्तों में उनका नाम अग्रगण्य है। सांसारिक वस्तुओं के प्रति मोह उनके लिए असहनीय है :—

—"आह ! मुझको नफ़स (मोह) ने मार डाला, वह अन्धेरे में मुझसे छिपकर बैठा, न जाने कहाँ। यदि वह मेरे हाथ आता तो मैं उसका गला तलवार से काट लेता।"[११]

परम प्रिय से मिलन सम्भव है परन्तु राग और द्वेष की भावना को छोड़ना पड़ेगा। यही सन्देश हिन्दू और मुसलमान दोनों के लिए है :—

—"मैंने तीन भवनों एवं दसों दिशाओं में उसे खोजा, परन्तु सब व्यर्थ। वे कहीं नहीं मिले। मैंने साधुओं एवं तपस्वियों से उनके विषय में पूछा, परन्तु मेरी बात सुन कर वे रोने लगे—अपने अज्ञान पर। अन्त में जब मैंने राग और द्वेष का दमन किया तो उसे अपने ही समीप पाया।"[१२]

उन्होंने अपने श्लोकों में हिन्दू और मुसलमानों के परस्पर बैर की निन्दा की है। अपने और पराये का भेदभाव मानव मन की कालिमा का द्योतक है। जब मनुष्य के भीतर यह अन्धकार नहीं रहेगा तब वह स्वयमेव भवसागर के पार हो जाएगा।[१३] शेख साहब के प्रत्येक श्लोक में दो पंक्तियाँ होती हैं। श्लोक अपने में पूर्ण और स्वतन्त्र होता है। इसके अतिरिक्त शेख ने कुछ वर्णनात्मक कविताएँ भी लिखी हैं जिनका विषय आध्यात्मिक है। इन्होंने अपने श्लोकों में प्रश्नोत्तर शैली को भी अपनाया है। भाषा संस्कृत-गर्भित है और ठेठ कश्मीरी के प्रयोग भी मिलते हैं।

रहस्यवादी काव्य-धारा को आगे ले जाने में अलकेश्वरी का नाम भी उल्लेखनीय है। १७वीं शताब्दी में इनका जन्म श्रीनगर में पण्डित माधव दरके घर में हुआ था। उन्हें कठिन तपस्या के पश्चात् आध्यात्मिक दिव्य-दृष्टि प्राप्त हुई और जीवन-पर्यन्त वे योग-साधना में लीन रहीं। उनका स्थान भारतीय योगियों की परम्परा में विशिष्ट है। उन्होंने लोकहित एवं लोक-कल्याण के लिए व्यावहारिक शिक्षा भी दी। अपने पिता से उन्होंने गुरु-शिक्षा ग्रहण की और उस परम-ब्रह्म की खोज में कई वर्षों तक योगाभ्यास में लीन रहीं। उनके विचारानुसार ईश्वर ही सर्वत्र व्याप्त है। उन्होंने लिखा है :—

—"तुम कौन हो और मैं कौन हूँ, क्या इस बात का विचार कोई करता है ? वास्तव में यह सब आपका ही रूप है। आपकी ही लीला है।"[१४]

१६वीं शताब्दी में महमूद गामी कश्मीर के एक प्रसिद्ध कवि हुए हैं। उन्होंने फारसी और कश्मीरी दोनों भाषाओं में रचनाएँ लिखी हैं। उनके काव्य में विविधता है। सूफी-मत से प्रभावित होकर उन्होंने कई रचनाएँ कश्मीरी भाषा में लिखी हैं जिनका कोई विशेष महत्व नहीं। महमूद गामी के समकालीन सूफी कवि रहमान डार हुए हैं। ब्रह्म को प्रियतम मानकर उसके विरह में उन्होंने कई रचनाएँ लिखी हैं। अपने प्रियतम के साक्षात्कार हेतु वे व्याकुल हैं :—

—"ओ मेरे प्रिय ! मेरे संगी साथी, मुझ पर कृपा करो, तनिक दर्शन तो दिखाओ। मुझे केवल तुम्हारी आशा है। मैं अपना शीष तुम्हारे चरण-कमलों पर अर्पण कर दूँगी। मेरी आँखों को भी कभी-कभी धोखा हो जाता है और मैं भ्रमवश दूसरों को पुकारने लगती हूँ।"[१५]

शम्स फकीर कश्मीर के प्रसिद्ध सूफी कवि हुए हैं जिन्होंने सूफी काव्य-धारा को अपनी काव्य-वाणी द्वारा एक नवीन जीवन प्रदान किया। इन्होंने आध्यात्मिक भावनाओं को लौकिक प्रेम के आवरण में प्रस्तुत किया। उनकी रचनाओं में यद्यपि प्रेम-वर्णन बड़ा मनोरंजक एवं हृदयग्राही है तथापि उसमें असीम के साथ एकाकार होने का आभास सर्वत्र मिलता है। आध्यात्मिक प्रेम की हाला पीकर वे मस्त हैं। वह हाला ही उनके लिए अमृत है।

वहाबखार एक अन्य सूफी कवि हुए हैं। वहाब उनका नाम था और जीविका-निर्वाह के लिए लोहार का काम करते थे। लोहार को ही कश्मीरी भाषा में "खार" कहते हैं। वे अशिक्षित थे और गुरु-शिक्षा उन्होंनें अपने पिता से ग्रहण की थी। उन्होंने कई गजलें एवं गीत लिखे हैं परन्तु कहीं भी कोई संग्रह प्राप्य नहीं है। रहस्यवादी एवं दार्शनिक काव्य-धारा में प्रशंसनीय योगदान देने का श्रेय १६वीं शताब्दी में पण्डित नन्दराम को भी है। पण्डित नन्दराम परमानन्द के उपनाम से सारे देश में प्रसिद्ध हैं। कश्मीर के प्रसिद्ध तीर्थ-स्थान मट्टन (मार्तण्ड) के निकट सीर गाँव में उनका जन्म सन् १७९१ में हुआ। उनके पिता मट्टन में लेखपाल थे और पण्डित नन्दराम भी २५ वर्ष की आयु में लेखपाल नियुक्त हुए। ८८ वर्ष की आयु में उनका देहावासन हुआ। मृत्यु से कई वर्ष पूर्व उन्होंने लेखपाल की नौकरी से त्यागपत्र दे दिया था। जीवन के आरम्भिक वर्षों में ही उन्होंने भगवत्गीता, शैवमत, ब्रह्मवाद और पुराणों का विधिवत् अध्ययन

आरम्भ कर दिया था। आत्मज्ञान की प्राप्ति मनुष्य का परम लक्ष्य है, इस विषय में स्वामीजी का कथन कितना मर्मस्पर्शी है :—

—"जीते जी मरना एक खेल है, इसी को सहज विचार कहते हैं। अपनत्व को भूल कर वास्तविक तथ्य से परिचित होना ही सहज-विचार है।"[१६]

अहं की भावना जीवात्मा के लिए घातक सिद्ध हो सकती है। स्वामीजी ने भक्ति-मार्ग को अपनाया और उपासक के रूप में अपने इष्ट के दर्शनार्थ सदा लालायित रहे। योग-साधना भी उन्होंने की, परन्तु उनके काव्य में भक्ति-भावना की प्रधानता मिलती है। उनकी प्रसिद्ध रचना है··· "शिवलगन" जिसमें शिव और पार्वती के मिलन द्वारा आत्मा और परमात्मा के एकीभाव का रूपक बाँधा गया है। स्वामीजी ने माया की सत्ता को भी स्वीकार किया, यह जीव के सम्मुख भ्रम-पूर्ण स्थिति उत्पन्न करती है—

—"तू माया के साथ सवर्त्र व्याप्त है, शरीर से भी तेरी स्वतन्त्र सत्ता विद्यमान रहती है। सूर्योदय के पश्चात् ही छाया दिखाई पड़ती है।"[१७]

गीता के निष्काम कर्म-योग से वे अत्यन्त प्रभावित थे। जीवन को उन्होंने कर्म-क्षेत्र माना है जिसमें सदा सत्य की विजय होती है। सुन्दर कलात्मक ढंग से उन्होंने जनता को इस तथ्य से अवगत कराया :—

—"कुर्म क्षेत्र को धर्म का बल प्रदान करना। उसमें सन्तोष रूपी बीज बो देना। उसी से तुम्हें आनन्द रूपी फल प्राप्त होगा।"[१८]

स्वामी परमानन्द की दार्शनिक एवं रहस्यबादी विचार-धारा को आगे ले जाने वालों में श्रीकृष्णजू राजदान का नाम उल्लेखनीय है। उनके विचारानुसार शिव और कृष्ण में कोई भेद नहीं। वह सर्वाकार है, सम्पूर्ण सृष्टि ही उनका आकार है। वे शिव-रूप हैं। वे सर्वस्व शिव पर निछावर करते है और बदले में उन्हें दिव्य प्रेम की प्राप्ति होती है।

—"शिव कृष्ण है और कृष्ण शिव है। जैसे पहले मक्खन था तत्पश्चात् उसी का नाम घी पड़ा। निराकार ब्रह्म का रूप यह सारा त्रिभुवन है। सर्वाकार ने अपना विश्व रूप दिखाया।"[१९]

अन्य अनेक ज्ञात एवं अज्ञात कवियों ने इस काव्य-परम्परा को आगे बढ़ाया। कविवर 'महजूर' को यह काव्य विरासत के रूप में प्राप्त हुआ था और उन्होंने इसका गम्भीर अध्ययन किया था। आरम्भ में उन्होंने भी कुछ दार्शनिक कविताएँ लिखी हैं, परन्तु समय की माँग कुछ और थी अतः वे

इस ओर अधिक ध्यान न दे सके । दार्शनिक तथ्यों का निरूपण उनके काव्य में यत्र-तत्र अवश्य मिलता है परन्तु कहीं भी उन्होंने जीवन और जगत् से विमुख होकर पलायन की बात नहीं कही है। जगत् को उन्होंने निस्सार नहीं बताया। जीवन में संघर्ष के महत्व को उन्होंने स्वीकार किया हैं। धार्मिक संकीर्णता एवं कट्टरता के विरुद्ध उन्होंने एक नवीन दृष्टिकोण से लिखा है :—

—"वहाँ मैंने हिन्दू और मुसलमान को एक ही शक्ति के सम्मुख नतमस्तक देखा। इस से अधिक मैं प्रेम-नगरी का क्या हाल बताऊँ।"[२०]

'महजूर' के काव्य में किसी विशेष दार्शनिक सिद्धान्त या मत का विवेचन नहीं मिलता है और न ही वे स्वयं किसी विशेष मत के अनुयायी थे। सामान्य रूप से उन्होंने यत्र-तत्र दार्शनिक विचारों को काव्य-वाणी प्रदान की है। उनका विचार था :—

—"अपने को भूल जाना वास्तव में परमतत्व को पाना है। जब मैंने यह जान लिया तो मन शान्त हुआ।"[२१]

२—शिव छुई थ्लि थ्लि रोज़ान
मो जान ह्युन्द त मुसलमान
त्रुक अ्यि छुक त्ति पान परज़िनाव
सो्यि छ्यि साहिबस ज़ानी ज़ान

३—कुस मं्रि ति कुस मारन
म्रि कुस त्ति मारन कस्
युस हं्रि हं्रि त्रांविथ ग्रि-ग्रि करे
अ्दि सुई मरे ति मारन तस्

४—गोरन वनुनम कुनुई वछून
न्यब्रि दोपनम् अन्दर अछून
सुई ग्व ललि म्य वाक् त्ति वछून
तवै म्य ह्योतुम नगै नंछुनै

५—मिथ्या कपट असत् त्रोवुम्
मनस् करूम सुई वेपदेश
जनस अन्दर कीवल ज़ोनुम्
अनस् ख्यनस कुछ छुम द्वेष

६—गगन छ़ुई भूतल छ़ुई
छ़ुई छुक दयन पवन ति रात
अर्ग् चन्दुन पोश पोन्य छ़ुई
छ़ुई छुक सोरुई ति लागै ज़ि क्या ।
७—छ़ालुन छु वज़मलि ति त्रटे
छ़ालुन छु मन्दयन गटिकार
छ़ालुन छु पान पंनुन् कडुन ग्रटै
ह् यति मालि सन्तोष् वातो पानै ।
८—मुडस ग्यानिच कथ नो वनिज़िहे खरस गोर दिनि रावियिदोह
सकि शाठस फल नो व्विज़े कोमयाजन राविरिज़िनि तील
९—अविचारी हा मालि छी पोथि परान्
यिथि तोति परान राम पिंजरस मंज्
गीता परान हीथा लबान्
परिम् गीता ति परान छ़ुस ।
१०—परिवुन्यो लूकन छुकि परान
पानस छुई नि गछ़ानकनन्
यिथि पठि पुज् छुई नाटिकिनान
पानस नि पोशान पकि-मण्डि ति कनि ।
११—नफसी मोरूस ति वाय
खटित रूदुम् गटै
अथि यि यिहम् ति वायि
करतल छ़िन्हस हटै ।
१२—छांजाम त्रन भवनन् तिब्रयि दशि दीशन्
नेब ति निशान लोबमस नि कुने
प्रछ़ाम सादन ति बयि तपर्यशन
तिम ति बूज़िथ् लगि वदने ।
दब यलि द्युतुम रागन ति देश्यन
अदि सुई म्य लोबुम् पानस निशे ।
१३—पर ति पान युस ह् युवई व्यदे
सुई भव स्यन्दे तरिथ आव ।

१४—छि कुस् ब्वह कुस् कांह व्यछारा
अक्षिन्न धारा सुई चोन् रूप ।

१५—आदनि यिखना छमि लादन तं सर हो वन्दै पादन
मदनि आसिस चानि वदनित् अज़ वात तम् दादन
यि दोदि नर्यन बयि मावन त् छिमगछान भ्रान्ति नादन ।

१६—गिन्दुना छु ज़िन्दि मरून् सहज-विचार करून
पानि रूसि पान सोरून सहज विचार करून

१७—मायायि सूत्यन छि शायि शायि आसानि कायाद्यि मंज़ नि-
ब्योनि रोज़ानो
सिरियिकि आसनि छायि छयि बासनि च्यूत्र वयमरशि
दिफित्रानि भगवानो ।

१८—कर्म भूमिक्रायि दिज़ि धर्मु क बल् सन्तोषि ब्यालि ब्ववि-
आनन्द फल ।

१९—शिव छुई केशव ति केशव छुई शिव
थंनि असि अदि प्योस ग्यबुई नाव
निराकार सुन्द् रूप त्रिभुवन ग्व
सर्वाकारन् होवि् विश्वरूप ।

२०—तति वुछ म्य अकिसी सजदि करान हि्यन्द ति मुसलमान
अमि खोतिब्वु क्या लोलिचे शहरिच खबर वनै ।

२१—रावुन छु लबुन् यामज़ोनुम् राम सपनुम दिल ।

+○+○+
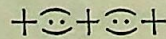
शशिशेखर तोषखानी
एम० ए० (अनुसंधित्सु)

अँधेरा : एक मनस्थिति

**

और अधिक गहराने दो अँधेरे को
लुढ़क जाने दो वह सीढ़ी
जो दृश्य से दृश्य को जोड़ती है
हवा के बीच प्रार्थनागीतों का धूम्र
एक सुवासित मृत्यु रचता है, तो रचने दो।
प्रतीक्षा सी खुली उदास खिड़कियाँ
शायद बच्चों की किताब सी बन्द हो जाँय।
दिशायें किसी अनाम भय की गोदी में
चुपचाप सिर लुढ़का दें।
परिचित अपरिचित सभी आकृतियाँ
अँधेरे के डुबाऊ आवर्त्तों बीच तडपें
और फिर डूब जाँय ——
डूबने दो।

पास के वृक्षों पर पक्षियों की उड़ान
समय के माथे पर
दर्द सी गड़ जाती है—गड़ जाने दो।
नहीं ! याद नहीं करो, उन तमाम घाटियों के नाम
जहाँ हम बेच कर आये हैं अपने सभी सपने
सामने बह रही इस नदी को
सिर्फ एक ध्वनि मात्र रह जाने दो
जिसमें हम दो उदास पत्थरों से
रात भर—
भीगते रहें, भीगते रहें।

+⌣+⌣+

त्रिलोकीनाथ गंजू
एच० एच०, एच० एस०
बी० एड० एम० ए०
प्राध्यापक हिन्दी विभाग
कश्मीर विश्वविद्यालय
**

कश्मीरी भाषा के शब्द-वातायन से

यह स्तम्भ अब स्थायी रूप में 'वितस्ता' में प्रकाशित हो रहा है। पिछले दो प्रकाशनों में पाठक यह देख चुके हैं कि श्री ग्रियर्सन की यह मान्यता कि कश्मीरी भाषा दरद परिवार की एक शाखा है कितनी भ्रामक और असंगत है। इस भाषा में वैदिक संस्कारों से लेकर संस्कृत, प्राकृत, पाली और अपभ्रंशों की अमिट छाप अभी भी विद्यमान है, जिसको श्री ग्रियर्सन ने छुआ भी नहीं है। न ही उन्होंने कश्मीरी भाषा के प्रति यास्क और पाणिनि के संस्कारों का कहीं उल्लेख ही किया है। वस्तुस्थिति यह है कि कश्मीरी स्वतः एक स्वतन्त्र अपभ्रंश है जिस प्रकार भारतीय भाषा परिवार में अन्य अपभ्रंश हैं। इस भाषा का अन्तरंग रूप ठेठ संस्कृत शैली के अनुरूप ही है और आश्चर्य यह है कि भारतीय आर्य-भाषा परिवार में यही एक ऐसी भाषा है जहाँ अभी भी वैदिक शब्दों का बहुप्रयोग प्रचलित है।

हम इस स्तम्भ में कश्मीरी भाषा का यथार्थ कलेवर पाठकों के सामने रखकर श्री ग्रियर्सन द्वारा स्थापित मान्यता की न्यायोचितता उन्हीं से अँकवाना चाहते हैं।

कश्मीरी संज्ञाएँ

कश्मीरी संज्ञा	वैदिक संस्कृत	हिन्दी
१—वखुल	उलूखल[१]	ओखली‡

१—ऋग्वेद १–१८–६ कश्मीरी भाषा में "उ" मात्रा "व" में बदली है,....उमा—वमा, उस्ताद—वस्ताद।

‡. ब्रज-भाषा के कवियों ने भी 'उलूखल' का प्रयोग किया है—**सम्पादक**।

२—खल	खला	खलिहान
३—अदुर	आर्द्रा[२]	गीला*
४—बस्त	वस्त[३]	खाल
५—भंग	भंग[४]	भांग चरस
६—भअ्सुर	भस्त्रा[५]	धौंकनी
७—नअ्श	स्नुषा[६]	बहू
८—घानअ्	घाना[७]	दाना
९—नअ्विद	नापति[८]	नाई
१०—निथ	नीथ[९]	ले जाना
११—फीनअ्	फेन[१०]	झाग या फेन

कश्मीरी धातु क्रिया

१—कश्मीरी—खट्टुन, मूलधातु "खट्ट संवरणै, सवरणं हि गुप्तम्" खट्ट यह धातु संवरण अर्थात्: छिपाने के लिए है। हिन्दी—छिपाना।

२—कश्मीरी—प्रअ्ोन, मूलधातु, "प्री कान्तो" प्री, धातु उजालेपन श्वेत या गौरवर्ण के प्रति है। हिन्दी—सफेद।

३—कश्मीरी—शकह्, मूलधातु "शकि शंकायाम्" शक् धातु शंका के प्रति है—शंकाते। हिन्दी—शंका।

४—कश्मीरी—च्अ्हुन, मूलधातु "चषपानि"[११] चष धातु चाटने के प्रति है, "चुचूष"। हिन्दी—चाटना।

---

१. ऋग्वेद १०-८४-७।
२. तैत्तरीय ब्राह्मण १-५-२।
३. ऋग्वेद १-१६१-१३।
४. वही—९-६१-१३।
५. शतपथ ब्राह्मण ११-२-७।
*: अवधी में 'ओदा'।—**सम्पादक**
६. ऋग्वेद, १०-८-६०-१३।
७. बही १-१६-२।
८: शतपथ ब्रह्मण, ३, १, २, २, व्यंजन परिवर्तन।
९. ऋग्वेद, ४, ३, १६,।
१०. वही, १, १०, ४३।
११. कश्मीरी भाषा में "श" या "ष" प्रायः "ह" में परिणत होता है।

५—कश्मीरी—चेनुन, मूलधातु "चिते संज्ञाते" "चित" धातु अंतः चेतना के प्रति है, हिन्दी—चेतना ।

६—कश्मीरी—बन्दन्, मूलधातु, "बिदि भवयवे" । 'बिद' धातु अवयव अंग के प्रति है । क०—प्रयोग—म्य छू बन्दन बन्दन् दोद । हि०—मेरे अंग अंग में पीड़ा है । हिन्दी—अवयव या "अंग" ।

७—कश्मीरी—ह्रस, मूलधातु "हीच्छ लज्जायाम्" । 'हीच्छ' धातु लज्जा के प्रति है । हिन्दी—नैतिक पतन ।

८—कश्मीरी—त्वगियान, मूलधातु "त्वगि कंपने" । त्वग धातु कंपने के प्रति है, हिन्दी—चूर चूर होना ।

९—कश्मीरी—वठअ्, मूलधातु "वठि एकचर्यायाम्" 'ववण्ठे' । वठ धातु मानसिक कुण्ठा के प्रति है । हिन्दी—कुण्ठा ।

१०—कश्मीरी—हड्न्, मूलधातु "हिडि गत्य अनादरयौ" हिडि धातु गति और अनादर के प्रति है । हिन्दी— उपहास ।

+○+○+
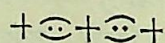
गोरस प्रिछ्यांम् सासि लंटे
यस नि क्युँह् वनान तंस क्या नाव,
प्रिछान प्रिछान थंचिस् ति लूसिस,
क्युँह नस निशे क्याहताम द्रावि ।

—लल्लेश्वरी

(मैंने अपने गुरु से कई बार यह प्रश्न किया कि जिसका कुछ नाम नहीं है, उसका वास्तव में क्या नाम है ? मैं पूछते-पूछते थक गई परन्तु उत्तर नहीं मिला । कुछ है, और उसी से सब कुछ निकलता है ।)

डा० मुहम्मद अयूबखाँ 'प्रेमी'
प्राध्यापक, हिन्दी विभाग,
काश्मीर विश्वविद्यालय

कबीर के देश में

**

आग की लपटों से
मन के कड़ाहों में
निष्ठा खौल रही है
जड़ता का पासंग डाल
दुनियाँ बुलबुलों के बदले
आत्मा तौल रही है।
यह केसरिया बाना
धरती के लालों का
खून है बहाना
किसी ने सुनी है क्या
लपटों की भाषा
प्रभुता बटोरने की आशा
फोड़ दिया बताशा!
व्यंग्य भरे बाज़ारों
आँखों की डोर से
उलझ गया तमाशा—
छीना-झपटी का
नेतृत्व कपटी का
खद्दर की ताज पोशी का
जनमन के गीत गा
नुकीली सफेद टोपियाँ

कुर्सियों से चिमट गईं
हार की धुन्ध उड़ाती हुई कुण्ठाएँ
कलैंडर की तारीखों में सिमट गईं
दुकानदारी सीखो
अपने को बेचो
कहीं कोई जागता हो
उसे तुम दबोचो।
भावना दो मुखी कुचलैंड़ हो गई
षड्यन्त्र साधना में ब्रह्माण्ड फोड़ गई
भविष्य अब लकीर है पीटने को
अपने ही देश में बात ऐसी हो गई
साजन भी खो गये सजनी भी खो गई
कबिरा तेरी चूनरी दाग़ दाग़ हो गई।

चाँदमारी हो रही थी। एक रँगरूट का निशाना बहुत ही खराब था। उस दिन उसने पचास गोलियाँ चलाई और एक भी निशाने पर नही लगी। हवलदार ने कुढ़कर कहा—"तू तो मकान की दीवार पर भी गोली चलाएगा तो भी खाली जायगी। उन झाड़ियों के पीछे जाकर अपने गोली क्यों नहीं मार लेता।"

रँगरूट सिर झुका कर धीरे-धीरे चला गया। थोड़ी देर बाद झाड़ियों के पीछे से गोली चलाने की आवाज आई। हवलदार का चेहरा फक् हो गया। सब स्तम्भित रह गए; भागे-भागे झाड़ी के पीछे गए। वहाँ पहुँचे तो रँगरूट ने हवलदार को सलूट मारके कहा—"उस्ताद माफी चाहता हूँ, गोली फिर खाली गई।"

सम्मतियाँ

++

थुम्पामोन, त्रावणकोर
(केरल)
२३-११-१९७०

सेवा में,

डा० रमेशकुमार शर्मा
आचार्य एवं अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग,
कश्मीर विश्वविद्यालय श्रीनगर, कश्मीर ।

माननीय महोदय ।

सादर नमस्कार ।

एक अपरिचित व्यक्ति का पत्र पाकर अन्यथा न मानें । मैंने संस्कृत की शास्त्री परीक्षा उत्तीर्ण किया है तथा हिन्दी में रुचि रखता हूँ । एक मित्र से आपकी पत्रिका 'वितस्ता' का १९६९ का शरदंक देखने को मिला । चित्त प्रसन्न हो गया । मैं नहीं समझता किसी भी विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग से इतनी उत्तम कोटि की पत्रिका प्रकाशित होती है, जो कि अपने क्षेत्र की भाषा, संस्कृति तथा साहित्य का इतना सुन्दर एवं सम्यक् प्रदर्शन करती हो ।

'वितस्ता' की विशेष बात यह है कि उसमें विद्यार्थियों की रचनाएँ ही अधिक हैं । अधिकांश विभागीय पत्रिकाओं में केवल शिक्षकों के ही लेख होते हैं । एक अहिन्दी भाषी प्रान्त से इतनी उत्तम पत्रिका आप निकालते हैं—आपको सादर नमस्कार है । केरल के एक कालिज में मेरे मित्र श्री मैथ्यू हैं, हिन्दी पढ़ाते हैं । उनको पत्रिका दिखाई तो उन्होंने बताया कि आप उत्तर प्रदेश के हैं। अहिन्दी प्रान्तों में हिन्दी वाले लोग बहुधा अपनी प्रादेशिक संस्कृति का प्रचार-प्रसार मात्र अपना कर्त्तव्य समझते हैं—परन्तु आप कश्मीर में कश्मीर तथा कश्मीरी का ही कार्य कर रहे हैं । यह अत्यन्त हर्ष का विषय है । मेरी ओर से अपने विभाग के शिक्षकों तथा विद्यार्थियों को बधाई दें । दक्षिण के पुस्तकालयों में 'वितस्ता' की प्रतियाँ आनी चाहिए । मैं इस दिशा में प्रयत्न करूँगा । क्या यह कहने का साहस कर सकता हूँ कि 'वितस्ता' का मुखावरण बदल दें—कुछ अच्छा नहीं लगा ।

अब आपको बताता हूँ मुझे 'वितस्ता' कैसे मिली । यहाँ एक 'थेकडेथु हाउस' है। वहाँ मेरे एक मित्र रहते हैं । थोड़ी सी हिन्दी जानते हैं । उन्हें मदरास हवाई अड्डे

के लाउन्ज में पत्रिका की प्रति पड़ी मिली थी। वहाँ से मैं ले आया। हिन्दी प्रेमी हूँ, इसलिए पत्र लिखने का चित्त किया। आशा है, सानन्द हैं।

आपका
क० वि० कृष्णनन नम्बियार
एम० ए० शास्त्री

+☉+☉+

National Mineral Development Corporation Ltd.,
61. RING ROAD, NEW DELHI 24
दिनांक २० जनवरी १६७०

Bhagwan Singh
Chairman

प्रिय विजयमोहिनी जी कौल,

'वितस्ता' का शरद अंक मिला। बहुत अच्छा लगा। कश्मीरी साहित्य के प्रचार-प्रसार के लिये 'वितस्ता' के द्वारा हिन्दी माध्यम अपनाकर आपने एक स्तुत्य प्रयास किया है। इसके दिव्मुखी लाभ होंगे। कविवर 'महजूर' की 'वलो हा बागवानों' नामक राष्ट्रीय रचना अत्यन्त उत्कृष्ट कोटि की है। बस, पढ़ते ही बनती है। ऐसी रचनाएँ ही, वास्तव में, किसी राष्ट्र के लिये 'अमर थाती' होती हैं। इसे पढ़ते ही सहसा गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर की स्मृति हृदय-पटल पर उभर आई।

डा० रमेश की कविता 'ये बोझे—भीतर के' बहुत ही सुन्दर बन पड़ी है। इसमें भावनाओं का उद्वेलन प्रशंसनीय है।

श्री त्रिलोकीनाथ गंजू के 'कश्मीरी भाषा' वाले लेख के सम्बन्ध में अभी कुछ नहीं कह सकता। पूरा पढ़ने के बाद अपनी सम्मति लिख भेजूंगा। मुझे लगता है कि यदि श्री गंजू अपने इस शोध-कार्य में ऐसी मग्नता से कार्य करते रहे तो सफलता इनके सदैव निकट रहेगी।

आपका ही,
भगवानसिंह

श्रीमती विजय मोहिनी कौल
मंत्री, हिन्दी परिषद्,
कश्मीर विश्वविद्यालय, अमरसिंह बाग,
पों० नसीमबाग, श्रीनगर,
कश्मीर (भारत)।

+☉+☉+

सरदार पटेल विश्वविद्यालय

वल्लभविद्यानगर
(गुजरात)
दिनांक २२-१-१९७०

प्रिय डा० शर्मा जी,

सस्नेह नमस्ते। "वितस्ता" के अंक पिछले दो वर्षों से मुझे यथा समय मिलते रहे हैं, इसके लिए मैं आपका आभारी हूँ। "वितस्ता" के सभी अंक आपके छात्रों की अन्तर्ज्योति के प्रकाशक हैं; नाना विषयों पर लिखे गए सुचिन्तित लेख, मौलिक व अनूदित अनुभूतिप्रवण गीत व सरस कविताएँ तथा अन्य विचारोत्तेजक सामग्री निश्चय ही बहुमूल्य है। पत्रिका पढ़ते समय वहाँ की धरती की गंध व जीवन-चेतना की चहक बरवस प्राणों में समाने लगती है, समा जाती है। यह प्रयास नितान्त उपयोगी व स्वागत के योग्य है। मैं आपको तथा पत्रिका से सम्बन्धित सभी अध्यापक मित्रों व छात्रों को इस सुन्दर प्रयास के लिए हार्दिक बधाई देता हूँ। आपकी पत्रिका दिनोंदिन समृद्धिशालिनी हो, यही मेरी कामना है। आपके प्रयास को मैं देश के साहित्यिक-सांस्कृतिक ऐक्य की एक कड़ी के रूप में देखता हूँ।

आपका,
रामेश्वरलाल खण्डेलवाल.
(प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग)

डा० रमेशकुमार शर्मा,
अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग,
काश्मीर यूनिवर्सिटी,
श्रीनगर (काश्मीर)

+◌+◌+
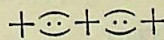
विश्वभारती पत्रिका
हिन्दी-भवन,
शान्तिनिकेतन, पश्चिम बंग
दिनांक १४-१-७०

प्रिय शर्माजी,

'वितस्ता' का नया अंक मिला। कश्मीरी भाषा पर लेख पढ़ा। 'महानय प्रकाश' पर मैंने कुछ चर्चा की है, क्या श्री गंजू के पास ऐसा कोई प्रमाण है जिसके आधार पर उसे १०वीं शती के आस-पास की रचना माना जा सके। अन्य अपभ्रंशों से उसकी भाषा में कुछ भेद मिलते हैं, जिससे वह रचना १४वीं-१५वीं शती की लगती है। 'सुख-दुख चरित्र,' और बाणासुर-बध क्या प्रकाशित हो चुके हैं ? या होने वाले हैं। कृपया श्री गंजूजी से पता लगाकर बतावें। 'कश्मीरी अपभ्रंश' में मेरी रुचि है।

'वितस्ता' की सामग्री में जीवन है और ताजगी, पढ़कर प्रसन्नता हुई। आशा है सानन्द हैं। शुभकामनाओं सहित।

सप्रेम,

आपका
रामसिंह तोमर

(डा० तोमर के उपर्युक्त पत्र का श्री गंजू द्वारा दिया गया उत्तर)

श्री तोमर जी,

गुरुदेव श्री डा० शर्माजी से मुझे आपका पत्र मिला। आपकी शंका का होना स्वाभाविक है क्योंकि "महानय प्रकाश" रचना ही एक ऐसी रचना है जो परम्परा एवं गुरुक्रम से रहित है। शितिकण्ठ ने स्पष्ट शब्दों में 'महानय प्रकाश' के श्लोक तृतीय की अवतरिणिका में कहा है "सर्वगोचरया देशभाषाया विरचयिमाह"। यह भाषा उस समय लोक-भाषा रही होगी। पर जो विषय उन्होंने अपनी पुस्तक में प्रस्तुत किया है वह वास्तव में शैव न्यून और शाक्त अधिक है। उन्होंने उद्घृत उदाहरण आगमों से लिये हैं। यथार्थ तो यह है कि १२वीं १३वीं शती में शैव दर्शन पूर्णतयः वैचारिक भूमिका पर आ चुका था इसका उल्लेख हमें महान् इतिहासकार कल्हण से भी प्राप्त होता है। अतः यदि यह ग्रन्थ ११वीं या १२वीं शती का होता तो यह केवल वाद या सिद्धान्त का पोषक हो सकता, पर, ऐसी बात इस ग्रन्थ में नही है, एक विशेष बात यह भी इस ग्रन्थ में है जो वास्तव में ८वीं-९वीं शती के शाक्त ग्रन्थों में मिलती है "गुरु रूपां मकार देवीं" यह परम्परा मात्र "घोर शाक्त" ग्रन्थों से ही उपलब्ध है। लेखक ने जिन ग्रन्थों को उद्घृत किया है वह वास्तव में कहीं भी उपलब्ध नहीं है और ऐसा प्रतीत होता है कि इन ग्रन्थों का उल्लेख किसी भी शैव ग्रन्थकार ने नहीं किया है, ये ग्रन्थ हैं—

क—अमावस्यात्रिंशिका।

ख—सिद्धपाद आदिदिशुः (सम्भवतः मायामत्स्येन्द्र नाथ)

ग—श्री रात्रिकायाम्।

यदि हम "महानय प्रकाश" को १४वीं-१५वीं शती का ग्रन्थ मानें तो एक बड़ी असंगति हो जाती है क्यंकि "बाणासुर वध" के लेखक श्री अवतार भट्ट ने अपने कश्मीर भाषा के काव्य के अन्त पर "भरत वाक्य" के अनुरूप ही राजसिंहासन के प्रति अपनी श्रद्धा अभिव्यक्त की है, और इसमें उन्होंने अपना समय स्पष्ट चौदहवीं शती का तृतीय चरण व्यक्त किया है। यदि हम "बाणासुर वध" भाषा एवं "महानय प्रकाश" की भाषा का तुलनात्मक विश्लेषण करें तो "महानय प्रकाश" की भाषा कम से कम ४०० वर्ष पूर्व भाषा लगती है। स्पष्ट तो यह है 'महानय प्रकाश' की भाषा की तुलना अभिनव गुप्त के "तंत्रसार" की प्राकृत-भाषा से सम्भवतः हो सकती है। यही कारण है मैं इस ग्रन्थ को १२वीं शती का स्वीकार नहीं कर सकता हूँ।

"बाणासुर वध" एवं "सुख दुःख चरित्र" अभी प्रकाशित नहीं हुए हैं। ये ग्रन्थ केवल भण्डारकार पुस्तकालय में पाण्डुलिपि के रूप में सुरक्षित हैं, और इन दोनों पर ही हमारे विभाग में शोधकार्य हो रहा है। पाठानुसंधान के बाद विभाग से ही इनको प्रकाशित करने का प्रयत्न किया जायगा।

शुभ कामनाओं के साथ

त्रिलोकीनाथ गंजू
प्राध्यापक, हिन्दी विभाग
कश्मीर विश्वविद्यालय, श्रीनगर

+⌣+⌣+
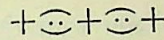
डा० भोलानाथ तिवारी
ई ४/२३ मॉडल टाउन दिल्ली-९
८-४-७०

प्रिय गंजू साहब,

मुझे आप के विभाग द्वारा भेजी गयी वितस्ता पत्रिका मिली। पत्रिका अच्छी है। बधाई। विशेषतः आपका लेख मुझे बहुत पसंद आया। लेख के अन्त में 'क्रमशः' लिखा है, अर्थात् इसका अगला अंश आगे प्रकाशित होगा। मैं उसकी उत्सुकता से प्रतीक्षा करूँगा। इस सुन्दर लेख के लिए बधाई। कुछ सुझाव भी इस सम्बन्ध में हैं, किन्तु वे मिलने पर ही बताए जा सकते हैं।

आपका
भोलानाथ तिवारी

+⌣+⌣+
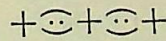
हिन्दी विभाग

अध्यक्ष
डा० भगवत्स्वरूप मिश्र
एम० ए०, पी-एच० डी०

आगरा कॉलिज,
आगरा-२
दिनांक २२-१-१९७०

बन्धुवर डा० शर्मा,

वितस्ता का शरदङ्क पाकर बड़ी प्रसन्नता और गौरव का अनुभव हुआ। कुछ ऐसा लगने लगा कि 'वितस्ता' काश्मीरी भाषा और संस्कृति का प्रवाह रूप तो है ही, पर साथ ही उसमें आगरा भी झलक रहा है।

शोध-निबन्धों से लेकर हल्के क्षणों में पठनीय ललित रचनाओं तक की यह पत्रिका प्रत्येक स्तर के पाठक के लिए उपयोगी सामग्री दे रही है। काश्मीर में हिन्दी

भाषा और साहित्य के प्रति अभिरुचि बढ़ाने के साथ ही यह पत्रिका हिन्दी-भाषियों को काश्मीरी भाषा उसके साहित्य एवं वहाँ की जनपदीय संस्कृति के अन्तरतम तक पहुँचने का अवसर प्रदान कर सकी है।

इसमें प्रयुक्त भाषा के विभिन्न स्तरों ने मुझे बहुत प्रभावित किया है। नदी के पाट की तरह हिन्दी को भी फैलना है। उसको भी अपने में विभिन्न शैलियों को आत्मसात करना है। 'वितस्ता' में मुझे इसकी झलक मिली है।

आपके कवि रूप का विकास तो मुझे आल्हादित ही कर देता है। काश्मीर निसर्ग ने इस रूप को जगा दिया है। इसीसे उसके अप्रस्तुत-विधान में कश्मीर के निसर्ग का प्रभाव बढ़ रहा है।

कश्मीरी भाषा पर जो कार्य आप करवा रहे हैं वह हिन्दी शोध कार्य में इतिहास बनाने वाला होगा। श्री गंजू को बधाई है।

'वितस्ता' विश्वविद्यालयों के हिन्दी विभागों के लिए अनुकरणीय है।

सप्रेम

भगवत्स्वरूप मिश्र

+◌+◌+
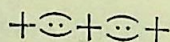
राममूर्ति त्रिपाठी,
एम.ए., पी.एच.डी, साहित्याचार्य, साहित्यरत्न
रीडर तथा अध्यक्ष
स्नातकोत्तर हिन्दी-विभाग।

विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन
दिनांक १५-१-७०

"विस्तता" मिली। तदर्थ धन्यवाद। "कश्मीरी भाषा" की प्रकृति और उद्भूति के विषय में श्री गंजू का निबन्ध अवधान पूर्वक आद्योपांत देखा गया—उनका दृष्टिकोण एवं प्रयास प्रशंसनीय लगा। उन्होंने ठीक ही कहा है कि भारत के संदर्भ में अंग्रेजों का दृष्टिकोण राजनीतिक है और ग्रियर्सन भी उससे अछूते नहीं रह सकते। श्री गंजू के इस प्रयास से महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष निकल सकते हैं और उनके आलोक में ग्रियर्सन-स्थापित मान्यताएँ परिवर्तित हो सकती हैं।

जहाँ तक पत्रिका का सम्बन्ध है—कश्मीर के अचंल से निकलने वाली कृति कें वे लेख विशेष महत्त्व के लगे, जिनमें काश्मीर की भाषा, साहित्य और संस्कृति के विषय में कुछ जानकारियाँ मिलीं। साहित्य की पत्रिका होने से अन्य काव्य-विधाओं और काव्य-चिन्तनों का अस्तित्व सहज प्रत्याशित है—पत्रिका उसकी पूर्ति करती है। हम आशा करते हैं कि इस गवाक्ष से हमें काश्मीर की संस्कृतिक और काव्यगत-उभयविध चेतना की झलकियाँ मिलती रहेंगीं।

भवदीय,

राममूर्ति त्रिपाठी

+◌+◌+
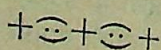
संवित् स कौल
Research Fellow

DEPARTMENT OF ANTHROPOLOGY,
PANJAB UNIVERSITY,
CHANDIGARH

मई १६, १६७०

माननीय, डा० शर्मा जी,

श्रीनगर में रहने वाले कुछ मित्रों के अनुग्रह से 'वितस्ता' के कुछ एक अंक पढ़ने को मिले। प्रकाशित सामग्री उच्चस्तरीय तथा सुपाठ्य है। तथा कश्मीर-स्थित राष्ट्रभाषा के शुभचिन्तकों के उत्साह की द्योतक है।

कश्मीरी भाषा तथा लोक-साहित्य में मेरी रुचि है, तथा इन विषयों पर आपकी पत्रिका में प्रकाशित लेखों को पढ़ कर मैं हर्षित हुआ। 'वितस्ता' के शरद्-अङ्क (खण्ड ५, अङ्क १) में श्री गंजू का 'कश्मीरी-भाषा' पर शोधलेख मननीय है। मैं कुछ विचार आपके शोधकों और 'वितस्ता' के पाठकों के ध्यानाकर्षण के लिये प्रस्तुत कर रहा हूँ।

मानव-शास्त्र (Anthropology) का विद्यार्थी होने के नाते मैं इस बात पर ज़ोर देना चाहता हूँ कि कश्मीरीभाषा के उद्गम तथा विकास को समझने के लिये केवल भाषा-विज्ञान का ही सहारा न लिया जाये, अपितु अन्य सम्बन्धित स्रोतों का भी अध्ययन किया जाना चाहिये। कश्मीरी भाषा के सम्बन्ध में जो भी दुविधा है, उसका एक मात्र कारण यही है कि हमारे प्रयास भाषा-विज्ञान के कुछ पहलुओं तक ही सीमित है। डा० रामविलास शर्मा के शब्दों में : "भाषा की उत्पत्ति का विवेचन... मानव समाज के उद्भव और विकास के प्रसंग में ही सम्भव हैं।" क्योंकि, "आदिम साम्यवादी व्यवस्था से लेकर आधुनिक जातियों के निर्माण तक समाज के गठन में, उसके ढाँचे में, वर्गों के परस्पर सम्बन्धों में, अन्य समाजों से संघर्ष या हेलमेल में जो परिवर्तन हुये हैं, वे सब भाषा में प्रतिबिम्बित होते हैं और उसका विकास निर्धारित करते हैं।" अतः, भाषा का अध्ययन उसकी ध्वनि प्रकृति, भाव प्रकृति और मूल शब्द-भण्डार को ध्यान में रख कर ही करना चाहिये।

भाषा-विज्ञान (Linguistics) मानव-शास्त्र का एक आवश्यक अंग माना जाता है। किसी भाषा के उद्गम तथा विकास का ज्ञान पाने के लिये उसके बोलने वालों का मानव-शास्त्रीय इतिहास (Ethnic History) का बोध होना अत्यावश्यक है। जातीय-मानवविज्ञान (Racial Anthropology) के दृष्टिकोण से कश्मीरियों के विकास तथा उद्भव के बारे में हमें बहुत ही थोड़ा ज्ञान है, क्योंकि कश्मीर के प्रागैतिहासिक (Pre-historic) काल, विशेषतया 'पाषाण-कालीन' (Stone Age) मानव के बारे में जानकारी नहीं के बराबर है। फिर भी, जो कुछ हम जानते हैं उसके अनुसार कश्मीर के आदि निवासी 'नॉग', 'पैशाच्', 'शश्' आदि जातियां थी। 'नॉग' एक मिश्रित 'मंगोलाभ' (Mongoloid) लोग थे जो सर्वपूजक थे और जो यहाँ सम्भवतः ईरान की उच्चभूमि से आये थे। इसी तरह 'पैशाच्' जाति के बारे में भी विचार है कि उनकी बन्धुता 'मंगोलाकार' लोगों से है, जिनका आद्य-स्थान भारत के उत्तर-पश्चिम में

तथा हिन्दु-कुश के दक्षिण में हुआ होगा। इन जातियों के कश्मीर में प्रवास के बाद भारतीय-आर्यों ने कश्मीर को घर बनाया। इन 'संस्कृत' भाषी लोगों ने पहले से रहने वाली यहाँ की जातियों को या तो निकाल बाहर किया या अपने समाज में ही समिश्रित किया।

भारतीय-आर्यों का कश्मीर की मानव-जाति संयोजन पर गहन प्रभाव पड़ा, जो आज भी विद्यमान है। वर्तमान कश्मीरियों पर जो भी शारीरिक-मानव-शास्त्रीय (Physical Anthropological) शोध कार्य हुआ है।उसके अनुसार कश्मीरी 'भूमध्य सागरीय' (Mediterranean) जाति के लोगों से सम्बन्धित हैं। विभिन्न आक्रमणों तथा प्रवसनों के कारण यहाँ के लोगों पर गहरा प्रभाव तो ज़रूर पड़ा, तथा भाषा में भी कुछ परिवर्तन हुए, पर प्रत्यक्ष रूप में कश्मीरी लोग और उनकी भाषा भारतीय-आर्यों तथा उनकी भाषा का ही अंग बनी रही।

ग्रियर्सन ने कश्मीरी-भाषा को 'दरद्-भाषा से जोड़ने का कुछ ज्यादा ही ज़ोर दिया, जो ठीक नहीं। कुछ लोगों का यह कहना भी ठीक नहीं, कि कश्मीरी भाषा का 'पैशाची' भाषा। भाषाओं से कोई सम्बन्ध नहीं है। इसी तरह ऐसे लोगों के प्रयासों का भी खण्डन करना चाहिये जो कश्मीरियों और उनकी भाषा को यहूदियों और उनकी भाषा से जोड़ते हैं।

प्रागैतिहासिक काल में आद्य-वासियों की भाषा को भले ही भारतीय-आर्य भाषा ने दबाया हो और कश्मीरी-भाषा को एक नया रूप दिया हो, पर आदिम—बोली के बहुत से मूल तत्व कश्मीरी-भाषा में समिश्रित हुये, जिसके कारण भारतीय-आर्य भाषा (संस्कृत) के गहन प्रभाव के बावजूद भी, कश्मीरी-भाषा और भारतीय-आर्य भाषा में भेद दिखाई देता है।

'वितस्ता' मुझे मिलती रहे, अपना सौभाग्य समझूंगा। नमस्कार।

भवदीय
संवित् स कौल

डा० रमेशकुमार शर्मा, अध्यक्ष
स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग,
कश्मीर विश्वविद्यालय।

+⊙+⊙+
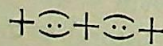
डा० मनमोहन गौतम
एम० ए०, पी-एच० डी०
वरिष्ठ प्राध्यापक
देहली कालेज (दिल्ली)

११४७, शोरा कोठी,
सब्जी मन्डी,
दिल्ली-७, २५-४-१९७०

प्रिय श्री गंजू,

आप का पत्र समय से मिल गया था। 'वितस्ता'…में आप का लेख पढ़ कर अतीव हर्ष हुआ।

निश्चय ही कश्मीरी भाषा के सम्वन्ध में विद्वानों में जो मतभेद रहा है उसका एक मात्र कारण यह है कि कश्मीरी भाषा का गहन अध्ययन उनके पास नहीं था। डा० ग्रियर्सन ने भ्रमवश जो कुछ लिख दिया उसी का आधार लेकर लोग उसे दरद और पैशाची प्राकृत दोनों से जोड़ते रहे थे। यह तो स्पष्ट है कि कश्मीरी पैशाची प्राकृत से सम्बन्धित है और दरद भले ही संस्कृत के मूल रूप से ऐक्य रखती हो पर वह संस्कृत की परम्परा में नहीं आती। इस प्रकार कश्मीरी दरद से सर्वथा भिन्न है। आपने इतिहास और भाषा-रूप दोनों का सुन्दर विश्लेषण करके सुस्पष्ट कर दिया है कि कश्मीरी संस्कृत की परम्परा में ही आती है। इस पर दरद का किंचित प्रभाव भी नहीं है। फारसी शब्दावली मात्र के ग्रहण से भाषा के संस्कार में अन्तर नहीं पड़ता।

आपने बड़े युक्तियुक्त तर्कों और तथ्यों से अपने विषय का प्रतिपादन किया है। भाषा-विज्ञान के क्षेत्र में व्याप्त बड़े भ्रम का निवारण आप ने किया है। इस के लिए मैं आपका साधुवाद करता हूँ। आशा है कि आप इस कार्य को और आगे बढ़ायेंगे। यह लेख आप 'नागरी-प्रचारिणी पत्रिका' अथवा 'हिन्दी अनुशीलन, प्रयाग' में भेजें जिससे भाषाविद् लोग इसे देखें और इस पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त कर सकें।

लेख का उत्तर भाग छपे तो आप उसे भी भेजें, आभारी हूँगा।

समस्त शुभ कामनाओं के साथ,

सस्नेह

मनमोहन गौतम

श्री त्रिलोकी नाथ गंजू

+○+○+
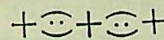
नीर बिनु मीन दुखी, क्षीर बिनु शिशु जैसे।
पीर जाके, औषध बिनु कैसे रहयों जति है॥
चातक ज्यों स्वाति बूँद, चंदकों चकोर जैसे।
चन्दन की चाह करि, सर्प अकुलात है॥
निर्धन ज्यों धन चाहे, कामिनी ज्यौं कंत चाहे।
एसी जाकें चाह, ताकों कछु न सुहात है॥
प्रेम को प्रभाव ऐसों प्रेम तहाँ नेम कैसे।
सुन्दर कहत, यह प्रेम ही की बात है॥

—सन्त सुन्दरदास

हिन्दी-परिषद्

१९६९-७० की गतिविधियाँ

++

इस सत्र के पदेन एवं निर्वाचित पदाधिकारी इस प्रकार हुए :—

संरक्षक : परमश्रेष्ठ श्री भगवान सहाय (पदेन)
अध्यक्ष : श्री नूरुद्दीन (पदेन)
सभापति : डा० रमेशकुमार शर्मा; विभागाध्यक्ष (पदेन)
उप-सभापति : डा० भूषणलाल कौल; प्राध्यापक (पदेन)
मन्त्री : कुमारी कौशल्या चल्लू एम० ए० (उत्तरार्द्ध)
उप-मन्त्री : कुमारी विजय दर एम० ए० (पूर्वार्द्ध)
उप-मन्त्री सांस्कृतिक कार्यक्रम : कुमारी सुदेश अरोरा एम० ए० (उत्तरार्द्ध)
कोषाध्यक्ष : श्री कन्हैयालाल रैणा एम० ए० (पूर्वार्द्ध)
अनुसंधित्सु प्रतिनिधि : कुमारी नीना कौल एम० ए०

इस प्रकार सभी पदेन एवं निर्वाचित पदाधिकारियों को मिलाकर परिषद् की कार्यकारणी का गठन किया गया। यह भी निश्चय किया गया कि परिषद् की सामान्य बैठक प्रति शनिवार दो घण्टों के लिए हुआ करेगी तथा मास में एक बैठक सांस्कृतिक कार्यक्रम की भी हुआ करेगी। इस निर्णय के अनुसार इस वर्ष परिषद् की कुल २५ सामान्य एवं विशेष बैठकें हुईं। पहली बैठक २५ अक्तूबर १९६९ को डा० रमेश कुमार शर्मा के सभापतित्व में आयोजित हुई। इसमें नए आए हुए पूर्वार्द्ध के विद्यार्थियों को परिषद् के उद्देश्यों से अवगत कराया गया तथा कई विद्यार्थियों द्वारा उनकी रचनाएँ सुनी गयी। इसके पश्चात् परिषद् के तत्वाधान में जो मुख्य बैठकें संयोजित हुईं उनका विवरण इस प्रकार है :—

पहली विशेष बैठक दिनाङ्क २५ नवम्बर को विभाग के लिपिक श्री जगन्नाथ भट्ट की माता जी के निधन पर की गई। इसमें एक शोक-प्रस्ताव पारित किया गया तथा इस प्रस्ताव की एक प्रति सन्तप्त परिवार को भेज दी गई।

एम० ए० उत्तरार्द्ध (१९६९-७०) के छात्र विभाग के शिक्षकों तथा पं० सुमित्रानन्दन पन्त के साथ।
पन्तजी के दोनों ओर बैठे हैं, प्रो० मुहिब्बुलहसन, प्रो० बशीरउद्दीन, स्वर्गीय प्रो० सा[illegible] तथा कु० शान्ता जोशी
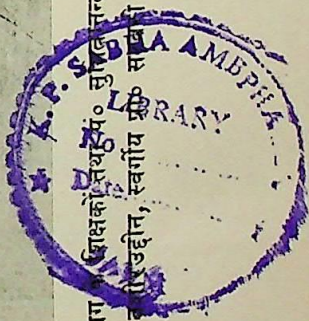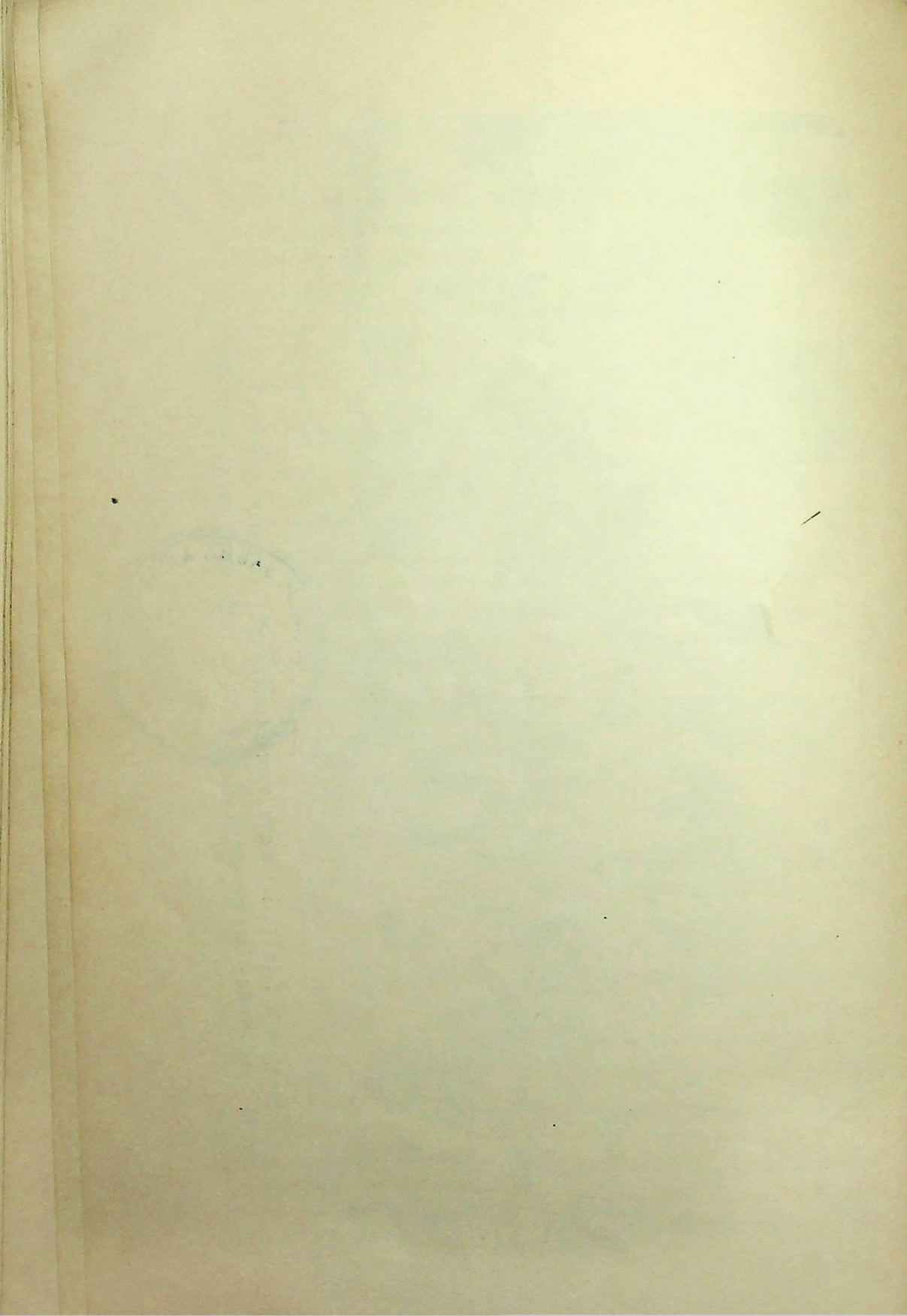
दूसरी विशेष बैठक दिनांक १८ मार्च को दिल्ली विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के रीडर डा० ओम्प्रकाश तथा राजस्थान विश्वविद्यालय के रीडर डा० विश्वम्भरनाथ उपाध्याय के सम्मान में आयोजित हुई। उन्होंने क्रमशः प्राचीन साहित्य तथा समकालीन साहित्य को नए परिवेश में रखकर उसके विषय में अपने विचार विद्यार्थियों के समक्ष रखे।

एक और विशेष बैठक दिनांक १३ मार्च को नैनीताल के डी० एस० बी० कालिज के हिन्दी विभागाध्यक्ष श्री छैल बिहारी गुप्त 'राकेश' के सम्मान में संयोजित हुई। डा० गुप्तजी ने रीतिकाल के मूल्यांकन के विषय में नए विचार तथा नवीन दृष्टिकोण विद्यार्थियों के समक्ष रखे।

श्री त्रिलोकीनाथ गंजू के विभाग में प्राध्यापक बनने के उपलक्ष्य में ५ अप्रैल १९७० को एक विशेष उत्सव का आयोजन किया गया। उत्सव के मुख्य अतिथि उप-कुलपति श्री नूरुद्दीन थे।

एक अन्य बैठक १३ जून को विभाग के प्राध्यापक डा० मुहम्मद अयूब खाँ की स्वसा श्रीमती शबीर बानू के असामयिक निधन पर शोक-सभा के रूप में हुई। इसमें एक शोक-प्रस्ताव पारित किया गया और प्रस्ताव की एक प्रति सन्तप्त परिवार को भेज दी गयी।

दिनांक ७ अक्तूबर १९७० को और एक विशेष बैठक हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि श्री सुमित्रानन्दन पन्त के सम्मान में आयोजित हुई। श्री पन्तजी ने विद्यार्थियों के सम्मुख इस उभरते हुए नवीन युग में मानवता की नई आवश्यकताओं का वर्णन किया। अन्त में पन्तजी ने कविता पाठ किया।

एक अन्य विशेष बैठक दिनांक १२ अक्तूबर को हिन्दी के प्रसिद्ध उपन्यासकार श्री भगवतीचरण वर्मा के सम्मान में संयोजित हुई। यह बैठक काव्य-गोष्ठी के रूप में हुई। इसमें विभाग के अध्यापकों तथा विद्यार्थियों ने कविताएँ सुनाईं। तत्पश्चात् वर्मा जी ने उभरती हुई नई पीढ़ी के विषय में विद्यार्थियों के सम्मुख अपने विचार रखे। अन्त में श्री वर्मा जी ने दो कविताएँ सुनाईं।

इसके अतिरिक्त परिषद् की अन्य जितनी भी बैठकें हुईं उनमें विभाग के विद्यार्थियों ने अपनी लिखी रचनाएँ सुनाई तथा समय-समय पर सभापति डा० रमेशकुमार शर्मा उप-सभापति डा० भूषणलाल कौल डा० मुहम्मद अयूब खां तथा श्री त्रिलोकी नाथ गंजू ने भी विद्यार्थियों को अपनी रचनाएँ सुनाकर लाभान्वित किया। इस वर्ष विद्यार्थियों द्वारा २२ कहानियाँ १२ कविताएँ, ३ वार्त्ताएँ एवं २ निबन्ध लिखे गये एवं परिषद् की गोष्ठी में सुनाए गए। ये सभी मौलिक रचनाएँ थी। इनमें से कई रचनाओं की प्रशंसा की गयी तथा सर्वश्रेष्ठ रचनाओं पर पारितोषिक दिए जाने की घोषणा की गयी और उन्हें विभागीय पत्रिका में स्थान दिया गया। परिषद् को अपने सभी उद्देश्यों में सफलता प्राप्त हुई। परिषद् की ओर से इस वर्ष विद्यार्थियों को सहायता हेतु ३०० रुपए तथा कर्ज के रूप में ५०० रुपये दिए गए।

दिनांक २४ अक्तूबर १६७० को गत सत्र की परिषद् का समापन-समारोह तथा इस सत्र की परिषद् का उद्‌घाटन समारोह माननीय प्रोफेसर बशीरुद्दीन के सभापतित्व में सम्पन्न हुआ। श्री बशीरुद्दीन के अतिरिक्त समारोह में विश्वविद्यालय के अन्य विभागों के विभागाध्क्ष एवं प्राध्यापक गण भी उपस्थित थे।

कार्य-क्रम का श्री गणेश 'सरस्वती-वन्दना' से हुआ। इसमें उत्तरार्द्ध की कुमारी कौशल्या चल्लू, सुभाषिणी कौल पूर्वार्द्ध की कुमारी गुड्डी सपरू तथा अनुसन्धित्सु कुमारी नीना कौल ने भाग लिया।

इसके पश्चात् हिन्दी परिषद् के सभापति डा० रमेशकुमार शर्मा ने मान्य अतिथि तथा समारोह में उपस्थित अन्य महानुभावों को परिषद् के नियमों तथा उद्देश्यों से अवगत कराया तथा परिषद् में पदाधिकारियों का परिचय श्री बशीरउद्दीन से कराया। तदुपरान्त उन्होंने श्री बशीरुद्दीन का स्वागत करते हुए उनके प्रति अपना हार्दिक आभार प्रकट किया कि उन्होंने अपने व्यस्त समय में से कुछ क्षण हमारे बीच व्यतीत कर हमें गौरवान्वित किया।

इसके उपरान्त मन्त्री कुमारी कौशल्या चल्लू ने इस सत्र की वार्षिक-रिपोर्ट पढ़ कर सुनाई। इसके बाद सांस्कृतिक कार्यक्रम आरम्भ हुआ जिसमें उत्तरार्द्ध तथा पूर्वार्द्ध के कुछ विद्यार्थियों तथा अनुसन्धित्सु कुमारी नीना कौल ने भाग लिया। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत कश्मीरी सहगान, डोगरी सहगान, हिन्दी गीत, उर्दू गजल तथा बंगला गीत गाए गए।

सांस्कृतिक कार्यक्रम के उपरान्त साहित्यिक कार्यक्रम आरम्भ हुआ जिसके अन्तर्गत विभाग के विद्यार्थियों, अनुसन्धित्सु तथा प्राध्यापकों द्वारा कविता-पाठ हुआ।

सर्व प्रथम परिषद् की मन्त्री कुमारी कोशल्या चल्लू ने "रेगिस्तानी चेतना" शीर्षक से एक कविता पढ़ कर सुनाई। इसमें जीवन की जलती प्यास तथा भूखी कुण्ठाओं का चित्रण था। मानव अपनी अभिलाषाओं के भँवर में पड़कर घूमता है और उस चक्कर का इतना अभ्यस्त हो जाता है कि अपने को स्थिर तथा अन्यों को घूमता हुआ समझ लेता है—यही इस कविता का भाव था।

कौशल्या चल्लू के उपरान्त उत्तरार्द्ध के श्रीं प्राणनाथ भट्ट ने "अगर सुली पहान वनहख" शीर्षक से एक कश्मीरी कविता पढ़ कर सुनाई। इसका भाव इस प्रकार था "हे मेरे कठोर प्रियतम ! प्रेम-मार्ग की कठोरता मुझे तब भासित हुई जब तुम आधे रास्ते में मेरा साथ छोड़ गए। मेरा रहस्य मेरे हृदय में ही घुटकर रह गया क्योंकि प्रेम में तुम पाषाण-हृदय निकले। यदि तुम्हें ऐसा ही करना था तो मुझे पहले ही क्यों न सचेत किया ताकि मैं भी अपने हृदय की अग्नि को तुम्हारे प्रेम से न भड़काता।"

इसके पश्चात् उत्तरार्द्ध की ही कुमारी सुभाषिणी कौल ने एक कविता पढ़ कर सुनाई। शीर्षक था 'सुख की पीड़ा'। कविता में जीवन की एक सुन्दर झाँकी प्रस्तुत की गयी थी।

१९७०-७१ की परिषद् के समापन समारोह के मुख्य अतिथि प्रो० बशीरउद्दीन कु० नीना कौल को पारितोषिक देते हुए। मध्य में, मंत्री कु० कौशल्या चल्लू
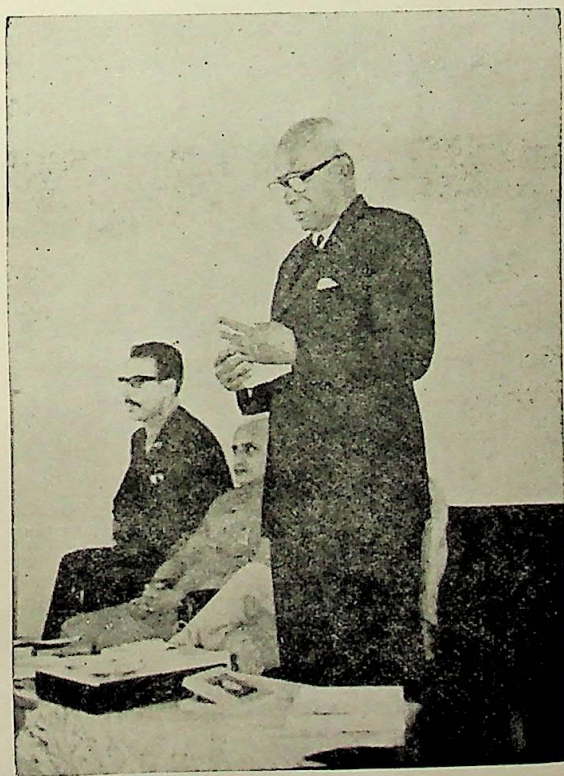
१९७०-७१ की परिषद् के समापन समारोह पर अभिभाषण देते हुए मुख्य अतिथि प्रो० बशीरउद्दीन। बैठे हैं गतवर्ष के समारोह के मुख्य अतिथि प्रो० श्रीकण्ठ कौल तोषखानी तथा उप-सभापति डा० भू० ला० कौल।
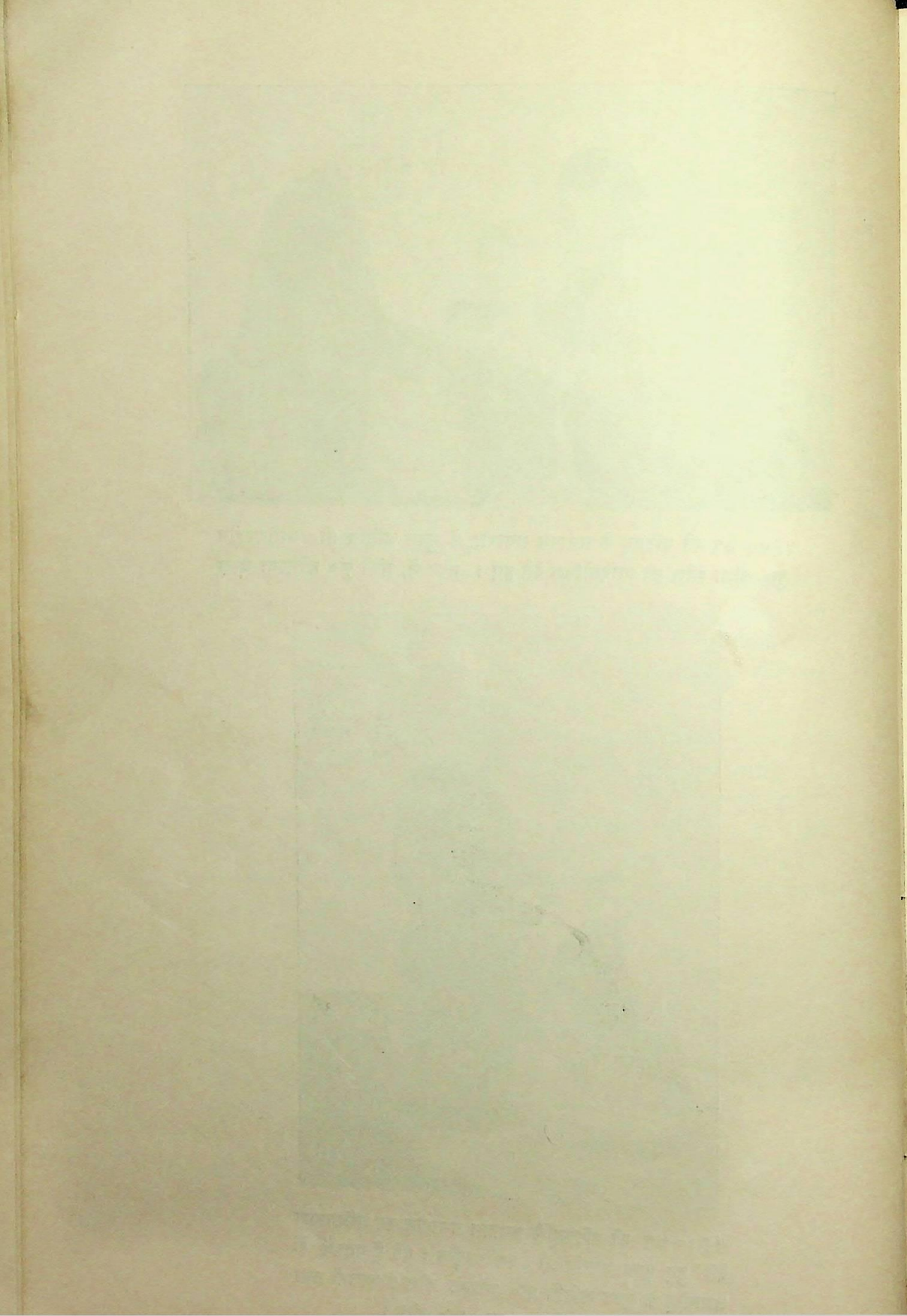
सुभाषिणी कौल के उपरान्त पूर्वार्द्ध की कुमारी गिरिजा काक ने "उफ ! यह धूम्रतारा" शीर्षक से एक कविता पढ़ कर सुनाई। भाव इस प्रकार था। "चिन्ता तथा परिस्थितियों के भीषण भूकम्प से जीवन में दरारें पड़ गयीं। हत-प्रभ-चेतना, दिन में सरक कर जले पोल के बल्ब की भाँति खुद ही खुद लज्जित होती है। छलती आशा के सुदूर कोने में एक सितारा झिलमिला उठा। पर ओह ! यह अमंगल का प्रतीक धूम्रतारा है।"

तदुपरान्त अनुसन्धित्सु श्री शशिशेखर तोषखानी ने अपनी कविता पढ़ कर सुनाई। शीर्षक था "एक इतिहास ध्वस्त नगर की चीख़।"

मूल्यहीनता और मोह-भंग की जिस स्थिति से आज की पीढ़ी गुज़र रही है उसमें 'क्रान्ति' और 'जनतन्त्र' जैसे शब्द खोखले और अर्थ हीन हो गए हैं फिर भी अपने विवेक के स्वर और विकल्प के अधिकार को अक्षुण्ण रखने के लिए व्यक्ति के विद्रोह की जो सार्थकता अभी शेष है, उसकी ओर यह कविता इंगित करती थी।

श्री तोषखानी के उपरान्त विभाग के प्राध्यापक डा० मुहम्मद अयूब ख़ाँ ने अपनी कविता पढ़ कर सुनाई। शीर्षक था 'दूर थरथराती आवाजें शाम हो गई।' जब कोई निर्मोही अपने प्रियजनों को विलाप करते हुए छोड़ जाता है तो दोनों पक्षों पर जो प्रभाव पड़ता है उसी को दर्द भरे इस गीत के द्वारा प्रस्तुत किया गया था। कविता में जीवन-यात्रा के विभिन्न दृश्यों को चेतना में टाँकते हुए और उन दृश्यों की प्रतिक्रिया अनुभव करते हुए सम्वेदनात्मक चित्र उभारा गया था। इसमें जीवन की ऊब थी तथा जकड़ती हुई उदासी का चित्रण भी था।

अन्त में विभागाध्यक्ष डा० रमेशकुमार शर्मा ने अपनी कविता पढ़ कर सुनाई। शीर्षक था 'पिंजड़े में बन्द चौबीस घण्टे'। संध्या, रात्रि, प्रभात फिर दोपहर और संध्या के चौबीस घण्टे मानो पिंजड़े में बन्द प्रतीत होते हैं। इस पिंजड़े को तोड़कर पंछी मानो उड़ जाना चाहता है........यही इस कविता का भाव था।

साहित्यिक कार्यक्रम के अनन्तर मुख्य अतिथि प्रो० बशीरुद्दीन साहब ने पदकों, प्रमाण-पत्रों तथा पुस्तकों के रूप में विद्यार्थियों में, निम्नलिखित पारितोषिक वितरित किए :—

१—स्वर्ण पदक

पंडित जगन्नाथ तिवारी स्वर्ण-पदक। १९६९ की एम० ए० परीक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त करने के हेतु :—

कुमारी फूला राज़दान (अनुसन्धित्सु)

२—रजत पदक

पंडित जगन्नाथ तिवारी रजत पदक। १९६९ की एम० ए० पूर्वार्द्ध की परीक्षा में विभाग के विद्यार्थियों में प्रथम स्थान प्राप्त करने के हेतु :—

कुमारी नैनसी तिक्कू (उत्तरार्द्ध)

साहित्यिक कृतियों के लिए दिए गए पदक

१—कुमारी नीना कौल (अनुसन्धित्सु प्रतिनिधि)
२—कुमारी कौशल्या चल्लू (उत्तरार्द्ध)
३—कुमारी सुभाषिणी कौल (उत्तरार्द्ध)
४—कुमारी विजय दर (पूर्वार्द्ध)
५—कुमारी शीला रैणा (पूर्वार्द्ध)
६—कुमारी गिरिजा काक (पूर्वार्द्ध)

इसके अतिरिक्त खेल-कूद के क्षेत्र में सक्रिय भाग लेने एवं सफलता प्राप्त करने के हेतु क्रीड़ा पदक :—

कुमारो फूला मुट्ठू (उत्तरार्द्ध) को प्रदान किया गया ।

निम्नलिखित विद्यार्थियों को परिषद् के पदाधिकारी नियुक्त होने के हेतु एवं परिषद् की गति-विधियों में सक्रिय भाग लेने के हेतु प्रणाण पत्र दिए गए :—

१—**कुमारी कौशल्या चल्लू**, मन्त्री ।
२—**कुमारी विजय दर**, उप-मन्त्री ।
३—**कुमारी सुदेश अरोरा**, उप-मन्त्री सांस्कृतिक कार्यक्रम ।
४—**कन्हैयालाल रैणा**, कोषाध्यक्ष ।

जिन विद्यार्थियों को विभागीय पत्रिका 'वितस्ता' में छापी उनकी कृतियों एवं समय-समय पर परिषद् की गोष्ठियों में सुनाई गई उनकी रचनाओं के लिए पुस्तकें पारितोषिक रूप में प्रदान की गयी, उनके नाम इस प्रकार हैं :—

१—**कुमारी कौशल्या चल्लू** (उत्तरार्द्ध)
२—**श्री प्राणनाथ भट्ट** (उत्तरार्द्ध)
३—**कुमारी उषा फ़ोतेदार** (उत्तरार्द्ध)
४—**कुमारी बिमला बाबू** (पूर्वार्द्ध)
५—**कुमारी तेजा भान** (पूर्वार्द्ध)
६—**कुमारी वीणा तिक्कू** (पूर्वार्द्ध)
७—**कुमारी मधुबाला** (पूर्वार्द्ध)
८—**कुमारी नीना कौल** (अनुसंधित्सु)

इसके अतिरिक्त खेल-कूद में सक्रिय भाग लेने के हेतु कुमारी सुदेश अरोरा (उत्तरार्द्ध) को पुस्तकें पारितोषिक रूप में प्रदान की गयीं ।

विभाग में बंगला भाषा की प्रारम्भिक कक्षा की परीक्षा पास करने वाले विद्यार्थियों को बंगला-भाषा प्रमाण-पत्र दिये गये । उनके नाम हैं :—

१—**कुमारी कौशल्या चल्लू** (उत्तरार्द्ध)
२—**कुमारी फूला मुट्ठू** (उत्तरार्द्ध)

३—कुमारी सुभाषिणी कौल (उत्तरार्द्ध)
४—कुमारी रत्नी रैणा (उत्तरार्द्ध)
५—कुमारी उषा लंगर (उत्तरार्द्ध)
६—कुमारी उषा कौल (उत्तरार्द्ध)

पारितोषिक वितरण के उपरान्त सभापति के अनुरोध पर मुख्य अतिथि श्री बशीरुद्दीन ने अपने अभिभाषण में विद्यार्थियों से कहा "मैं आप सबका हृदय से आभारी हूँ कि विभाग के वार्षिक महोत्सव के अवसर पर सभापति की कुर्सी देकर आपने मेरा परम आदर किया है। शर्मा जी के अनुरोध को अस्वीकार करना मेरे लिए असम्भव हो गया। पर समस्या यह सामने खड़ी हुई की किस भाषा में बोलूँ। हिन्दी-विभाग में आकर विदेशी भाषा में बोलना, वह भी स्वतन्त्रता के पश्चात् मुझे कुछ अनुचित जान पड़ा। अतः मैंने तय किया कि अपनी टूटी फूटी हिन्दी में ही अपने साथियों एवं छात्रों से बात करूँगा।

अपने भाषण में श्री बशीरूद्दीन ने आगे कहा, "आप इस बात को मानेंगे कि सिवाय बंगाली लेखकों के हमारे देश के उर्दू या हिन्दी के लेखक अपनी मातृभाषा के अतिरिक्त अपने समीपी प्रान्त की भाषा से भी परिचय नहीं रखते। यह बात मुझे तब अनुभव हुई जब मैं उर्दू में कहानियाँ, उपन्यास व नाटक आदि पढ़ा करता था। जब मैं बंगला साहित्य से भी परिचित हुआ तो मैंने देखा कि बंगला और उर्दू साहित्य में मूल भेद विचारों की गम्भीरता, विषय की नूतनता तथा "स्टाइल" आदि का है। कारण यह है कि बंगला के अधिकांश लेखक फ्रांसीसी और जर्मन साहित्य से परिचित हैं। उदाहरणार्थ टैगौर जर्मन और फ्रांसीसी जानते थे और अरविन्द घोष तो लातीनी भी जानते थे जब कि अन्य भाषाओं के लेखक अपनी भाषा तक ही सीमित है। मैं जानता हूं कि हिन्दी में भी कुछ लेखक बंगाली से वाकिफ हैं परन्तु जहाँ तक मेरा विचार है उर्दू का कोई भी लेखक मुझे अब तक ऐसा नहीं मिला जो विदेशी भाषाओं से परिचित हो। हिन्दी वालों से मुझे यह कहना है कि जब तक आपका भाषा-ज्ञान अपने देश की हीं नहीं अपितु विदेश की उन भाषाओं से जिनका साहित्य विचार-पूर्ण एवं गम्भीरता पूर्ण है, परिचित न हो तब तक आपकी साहित्य-साधना दुर्बल रहेगी। साहित्य का अर्थ सुन्दर गद्य एवं कविता ही नहीं है। उन्नति प्राप्त साहित्यकार पुराने साहित्य से पूर्ण-रूपेण परिचित होकर एक नए साहित्य को जन्म देते हैं जो मनुष्य एवं मानवता को आगे बढ़ाने में सहायक हो।"

अपने भाषण को आगे बढ़ाते हुए मुख्य अतिथि बोले, "आप हिन्दी के शिक्षक एवं विद्यार्थी होने के नाते सदैव यह याद रखें कि साहित्य की उन्नति का रास्ता दूसरे प्रान्तों एवं विदेशों के उन्नति प्राप्त साहित्य में से होता हुआ जाता है। मुझे सदा इस बात का दुःख होता रहा कि हमारे देश में भाषा सीखने का शौक बहुत कम है। नतीजा यह निकलता है कि हम हिन्दी या उर्दू इसीलिए सीखते हैं कि उससे

हमको नौकरी मिल जाए। मैं खास कर शिक्षकों से कहूँगा कि वे अपनी भाषा के अतिरिक्त अपने समीपी प्रान्तों की भाषाओं से भी परिचय रखें। यह आवश्यक नहीं कि विज्ञान के लिए ही विदेशी भाषा का ज्ञान ज़रूरी है। मेरे विचार से साहित्य के पुजारियों के लिए दूसरे साहित्यों से परिचित होना अति आवश्यक है। हाँ! यदि भाषा कठिन लगे तो अनुवाद से ही लाभ उठाया जाए। अन्त में मैं फिर यही कहूँगा कि छात्र अपनी शिक्षा को टेक्स्ट बुक तक ही सीमित न रखें अपितु साहित्य से सम्बन्धित अन्य प्रसिद्ध पुस्तकों को भी पढ़ें।"

प्रो० बशीरुद्दीन के भाषण के बाद, विभागाध्यक्ष डा० रमेशकुमार शर्मा उनके प्रति आभार प्रदर्शन करते हुए बोले, "एक पुरानी कहावत है कि भाषाएँ भले ही भिन्न-भिन्न हों पर मानव के हँसने और रोने की भाषा प्रत्येक स्थान पर एक जैसी है। मैं समझता हूँ कि जितनी खुशी आज के 'हिन्दी भाषण' से मुझे और मेरे विद्यार्थियों को हुई उतनी इससे पूर्व किसी भी शुद्ध संस्कृत मिश्रित तथा शुद्ध उच्चारण वाले भाषण से नहीं हुई होगी। कारण यह है कि चाँदी के वर्कों में छिपी गोबर की मिठाई से मिट्टी के थाल में रखी शुद्ध, मीठी, सेहत देने वाली मिठाई अधिक लाभ-प्रद होती है। जैसा कि प्रो० बशीरुद्दीन जी ने फरमाया, विभाग में हमने विभिन्न भाषाएँ पढ़ाने का निर्णय किया है जिस में उर्दू बंगला, तमिल के अतिरिक्त जर्मन, फ्रेंच भाषाओं का प्रारम्भिक ज्ञान भी दिया जाएगा।"

आगे सभापति बोले "परिषद् या विभाग में जो भी कार्य होता है वह एक आदमी से नहीं चलता। सभी के सहयोग से प्रत्येक कार्य सम्पन्न होता है। इस दृष्टि से मैं अति गर्व के साथ कह सकता हूँ कि हमने सदैव अपने अन्य विभागों के मित्रों से भी स्नेह पूर्ण सद्-सहयोग पाया है तथा अपने साथियों एवं छात्रों से मैंने जब भी जिस रूप में सहायता चाही है, वह पर्याप्त मात्रा में मुझे प्राप्त हुई। अन्त में मैं प्रो० बशीरुद्दीन साहब तथा अन्य उपस्थित महानुभावो के प्रति हार्दिक आभार प्रकट करता हूँ कि उन्होंने यहाँ आने का कष्ट किया तथा अपना सहयोग देकर हमें गौरवान्वित किया।"

सभापति के इस छोटे से भाषण के उपरान्त सभी उपस्थित सज्जनों ने खड़े होकर राष्ट्रीय-गान में भाग लिया। तदुपरान्त सभी अतिथि-गण सभापति के अनुरोध पर जलपान के लिए पधारे और उस दिन का उत्सव समाप्त हुआ।

अन्त में, मैं उपसभापति डा० भूषणलाल कौल, अन्य प्राध्यापक गणों तथा विशेषकर सभापति डा० रमेशकुमार शर्मा के प्रति अपना हार्दिक आभार प्रकट करती हूँ जिनके कृपा-पूर्ण पथ-प्रदर्शन तथा स्नेह-पूर्ण सद्-सहयोग के कारण परिषद् को अभूतपूर्व सफलता प्राप्त हुई। अनुसन्धित्सु कुमारी नीना कौल के प्रति मैं अपना हार्दिक आभार एवं धन्यवाद प्रकट करती हूँ और समझती हूँ कि उनका सद्-सहयोग मुख्यतः मेरा संबल रहा है। मेरे सहयोगियों कुमारी विजय दर, कुमारी सुदेश अरोरा तथा श्री कन्हैयालाल रैणा ने जो सहयोग मुझे दिया उसके लिए भी मैं गर्व तथा हर्ष का अनुभव करती हूँ।
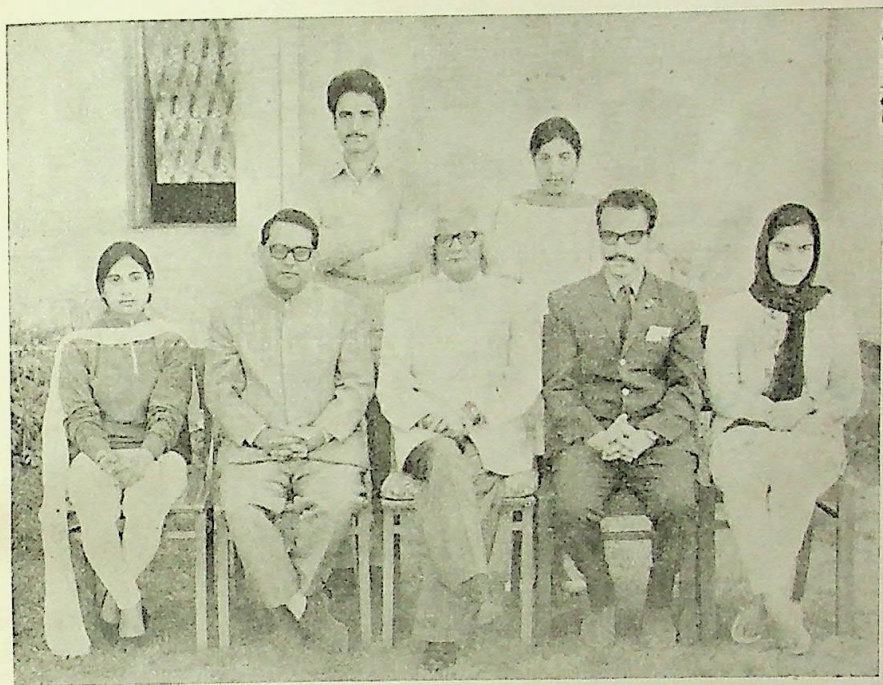
१९६९-७० की हिन्दी परिषद् की कार्य-कारिणी के सदस्य पं० सुमित्रानन्दन पन्त के साथ।
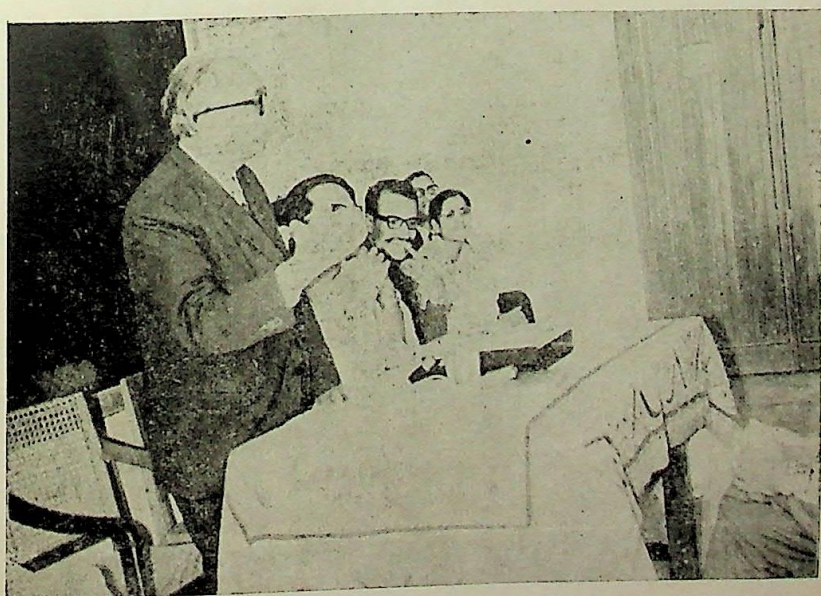
श्री भगवती चरण वर्मा हिन्दी परिषद् में कविता-पाठ करते हुए।
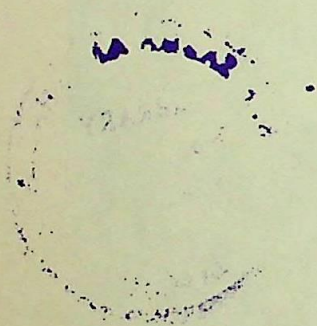
मुझे यह कहते हुए अति गौरव अनुभव होता है कि इस वर्ष साहित्यिक एवं सांस्कृतिक दोनों क्षेत्रों में हिन्दी-परिषद् को पूर्ण सफलता प्राप्त हुई। मैं आशा करती हूँ कि हिन्दी परिषद् भविष्य में भी इसी भाँति उत्तरोत्तर उन्नति करती रहेगी। इसके साथ ही मैं आशा करती हूँ कि अगले सत्र के मन्त्री को मैं अपना कार्य भार सुचारु एवं सुव्यवस्थित रूप से सौंपने में समर्थ होऊँगी।

कौशल्या चल्लू
मन्त्री

+○+○+

'रज्जब का गज्जब'
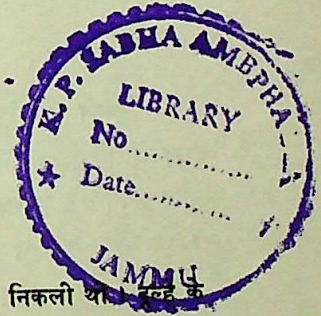
संवत् १६२४, स्थान सांगनेर।

रज्जबअलीखाँ नामक एक पठान युवक की बरात सज कर निकली थी। दूल्हे के मुख पर अद्वितीय तेज तथा रूप था।

कन्या के घर से कुछ दूर, मार्ग में, प्रसिद्ध सन्त दादू सामने से आते दिखाई दिए। बरात के पास आकर दादू रुक गए। चीख कर बोले :—

"ए रज्जब ! तूने गज्जब कर दिया" चारों ओर सन्नाटा छा गया। गाजे बाजे रुक गए। दादू फिर बोले :—

"रज्जब तूने गजब कर दिया। तू इस संसार में भगवान के भजन के लिए आया था, परन्तु सिर पर मौर बाँधकर नरक के द्वार की ओर जा रहा है। तू भगवान की प्रार्थना करना भूल गया है जिसके लिए तेरा जन्म हुआ था। विवाह करके तेरा कोई भी कार्य सिद्ध न होगा।"

लोग धक् से रह पए। दूल्हे का मुख सहसा चमचमाया ओर फिर—एक अलौकिक शान्ति उसके मुख-मण्डल पर, निस्तरंग सागर पर चन्द्रिमा के समान, छा गई। वह घोड़े से उतरा, पोशाक उतारी, अपने छोटे भाई को दूलहा के रूप में सजाया, और अपने गुरु, सन्त दादू के साथ हो लिया।

आगे चलकर वही दादू के मुख्य शिष्य कविवर सन्त रज्जब नाम से भारत में प्रसिद्ध हुआ।

नीना कौल
एम० ए० (अनुसंधित्सु)

प्रेमचन्दजी का एक अप्रकाशित पत्र

**

हिन्दी साहित्य की शिकार-साहित्य, रेखाचित्र, संस्मरण आदि विधाओं को विकसित एवं नवीन दिशा देने वाले स्वर्गीय पं० श्रीराम शर्मा एक उच्चकोटि के सहृदय विद्वान् थे। उनकी बहुमुखी विद्वत्ता तथा उनके सौहार्द्य के कारण हिन्दी के ही नहीं बगांली, मराठी, गुजराती तथा अँग्रेज़ी के विद्वान् भी उनका आदर करते थे। १६४२ के 'भारत छोड़ो' आन्दोलन में भाग लेने वाले देश के वीर सपूत पं० श्रीराम शर्मा गान्धी जी के अनन्य भक्त थे, और गान्धीजी उनका बहुत ही सम्मान करते थे।

भिन्न-भिन्न स्थानों पर रहने के कारण वे समान रूप से देश के सभी भागों के साहित्यकारों एवं नेताओं के साथ पत्र-व्यवहार किया करते थे। गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर, श्री महावीर प्रसाद द्विवेदी, पं० बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', श्री ब्रेलसफोर्ड, श्रीमती पर्ल एस० बक, गान्धीजी एवं श्री प्रेमचन्द आदि के साथ भी उनका पत्र-व्यवहार नियमित रूप से चलता था। पं० श्रीराम शर्मा के पास इन सभी के बहुत से पत्र थे।

ये सब पत्र पं० श्रीराम शर्मा जी ने अलग-अलग लिफाफों में भविष्य में प्रकाशन हेतु रखे थे। सन् १६३८-३६ में ये पत्र उन लिफाफों में भिन्न-भिन्न व्यक्तियों के नामों से चुन कर रख दिये थे। परन्तु यह प्रकाशन कार्य पूर्ण न हो सका।

१६४२ के आन्दोलन में पं० श्रीराम शर्मा उनके पुत्र-पुत्री एवं अन्य सम्बन्धी गिरफ्तार हुए तो उस अवसर पर बल्काबस्ती आगरा के उनके घर की तलाशी लेते समय पुलिस ने सारा सामान, पुस्तकें सड़क तथा आँगन में फेंक दिए। जिनमें ये सब पत्र भी थे। पुलिस उनमें से असंख्यों

'हंस'-कार्य्यालय

My dear Sri Ram ji

Your letter was a most pathetic reading.

With best wishes

Yours sincerely

Dhanpat Rai

प्रेमचन्दजी का पत्र : पं० श्रीराम शर्मा के नाम।

काग़ज़ात एवं पत्र आदि उठा कर ले गई। उनमें से बहुत सा सामान, पुस्तकें एवं पत्र आदि नष्ट हो गए तथा खो गए। शेष सामान शर्माजी की पत्नी तथा छोटी पुत्री ने समेट बटोर कर छत के कमरे में भर दिया।

१६४५ में जब शर्माजी जेल से छूट कर लौटे तो उन बचे खुचे पत्रों में से कुछ पत्र यहाँ वहाँ मिले और शेष पत्रों का कुछ पता न चला।

प्रेमचन्दजी के सुपुत्र श्री अमृतराय जब प्रेमचन्दजी से सम्बन्धित पुस्तक 'प्रेमचन्द, कलम का सिपाही' लिख रहे थे तो उन्होंने उन पत्रों की खोज प्रारम्भ की जो प्रेमचन्दजी ने अन्य व्यक्तियों को लिखे थे। अमृतराय इसी सिलसिले में शर्मा जी के पास भी आए और प्रेमचन्द जी द्वारा लिखे गए पत्रों के विषय में पूछ-ताछ की, परन्तु खोजने पर भी उन पत्रों का कुछ पता न चला।

इस घटना के कई वर्ष बाद १६६८ में जब मैं "पं० श्रीराम शर्मा की शिकार-विषयक कहानियाँ" विषय पर विशेष-प्रबन्ध (एम० ए० की परीक्षा के लिए) लिखने लगी तो शर्माजी की पुस्तकों एवं उनकी जीवनी आदि के विषय में खोज करते समय उनके सुपुत्र डा० रमेशकुमार शर्मा के काग़ज़ों में प्रेमचन्दजी का पं० श्रीराम शर्मा को लिखा यह पत्र मिला।

लखनऊ से लिखे गए इस पत्र में प्रेमचन्द जी ने शर्मा जी के साहित्य सम्बन्धी ज्ञान के विषय में लिखते हुए उनके प्रति अपने विचारों को प्रकट किया है।

पं० श्रीराम शर्मा की पुस्तक "भारतीय कुश्ती कला" की जो पाण्डु-लिपि खो गई थी उसके विषय में भी इस पत्र में लिखा है। यह पत्र प्रेमचन्दजी ने अँग्रेज़ी में लिखा था। इस पत्र का हिन्दी अनुवाद इस प्रकार है :—

'हंस'-कार्यालय

नवलकिशोर बुक डिपो
लखनऊ ता० ६-२-१६३१ ई०

मेरे प्रिय श्रीराम जी

आपका पत्र पढ़ने में अत्यन्त करुण लगा। आपकी लिखी भूमिका पढ़ कर बड़ी प्रसन्नता हुई। आपके लिखने का ढंग सचमुच बड़ा मोहक है और ऐसा प्रतीत होता है कि विषय से आप भली-भाँति परिचित है आपको विषय पर पूर्ण अधिकार प्राप्त है। वंश, जाति तथा वर्गों आदि का आपका वर्णन, चित्र तथा विवरण सभी कुछ बड़ा दिलचस्प बन पड़ा है। तो, जिसे

जीवन में सुख कहते हैं, वह आपको मिला नहीं है। स्वयं भी इसी जाति का प्राणी होने के नाते मैं आपके साथ हार्दिक सहानुभूति रखता हूँ। अत्यन्त पौरुष से आपने जिस आघात को सहा है मुझे तो वह तोड़ कर रख देता। किसी पुस्तक, जो जीवन-भर के परिश्रम का फल होती है, उसे पुनः लिखने के लिए कार्लाइल का सा उद्यम चाहिए और आप में यह गुण विद्यमान है। सचमुच जैविकी पर एक लोकप्रिय पुस्तक जिसमें जीवन वृतान्त, चित्र, तथा आदतों का वर्णन हो, का बड़ा स्वागत होगा। मैं एक प्रकाशक होता तो वर्ष के प्रकाशनों की सूची में इसे सर्वप्रथम स्थान देता फिर भी मेरा विचार है कि भारतीय प्रेस इसे बड़ी तत्परता से अपनायेगा।

लम्बी बीमारी का एक शिकारी के जीवन में कोई स्थान नहीं है। यद्यपि मैं अपच के रोग से पीड़ित हूँ, मुझमें रक्त की कमी है, बूढ़ा सा हूँ, यद्यपि अभी पचासवाँ पार नहीं कर पाया हूँ। मैं अपने आपको यह सांत्वना देता हूँ कि मेरी आदतें ही, इसके लिए उत्तरदायी हैं। और कोई शक्तिशाली परिस्थिति मुझे झकझोरे नहीं तो इस आयु में मेरे लिए अपने को बदलना कठिन है। पर आपको तो बाहर की ज़िन्दगी से प्रेम रखने वाले एक शिकारी होने के नाते बीमार पड़ने का कोई अधिकार नहीं। आप तो इस मामले में मेरे क्षेत्र में अतिक्रमण कर रहे हैं।

यह सुनकर प्रसन्नता हुई कि आपकी ब्रेल्सफोर्ड से भेंट हुई और उन्होंने आपको "न्यू लीडर" के लिए लिखने का आमंत्रण दिया है। अवश्य लिखें, कोई भी व्यक्ति हमारे दुखी ग्राम्य-जनों का हित-साधन करने से आपसे अधिक उपयुक्त नहीं है।

पं० मोतीलाल का निधन हो गया है और उनके विछोह पर हम शोक मना रहे हैं। हमारे नेताओं में उनसे बड़ा नीतिज्ञ कोई दूसरा नहीं है।

मेरी कितनी इच्छा है कि आपसे बातचीत करूँ, खूब दिल खोलकर। किसी दिन आपकी कुटिया का द्वार खटखटाऊँगा। यह शहर की ज़िन्दगी, जिसमें मैं परिस्थितिवश फँस गया हूँ, मुझे मानसिक और भावनात्मक दृष्टि से (स्तर* पर) खाये जा रही है। गाँव की शान्त ज़िन्दगी जीना मेरी सबसे बड़ी महत्त्वाकांक्षा है (चरम* अभिलाषा है)।

आप तो जानते ही हैं कि मैं स्वयं ग्रामवासी हूँ और अपने ग्रामीण

---

* अनुवाद का विकल्प लेखिका द्वारा प्रस्तुत।

भाइयों का ऋण चुकाने की दिशा में ही मेरे अधिकांश साहित्यिक प्रयास समर्पित हैं।

यही विचार मन में रखकर मैंने एक मकान खरीदा। योजना यह थी कि मैं घर पर एक शांतिपूर्ण जीवन व्यतीत करूँगा, थोड़ा-बहुत साहित्यिक कार्य करता रहूँगा, इस पत्र का सम्पादन करूँगा और सीधे-सादे किसानों की संगत में रहने का आनन्द लूँगा। परन्तु प्रतिक्रिया इतनी निराशाजनक है कि यह पत्र मैं वस्तुतः बिना किसी लाभ के चलाये जा रहा हूँ—केवल सुदूर भविष्य से सम्बद्ध यह आशा मन में शेष है कि जो हो बलिदान कभी अपुरस्कृत नहीं रहता।

शुभ कामनाओं सहित

आपका अभिन्न

धनपतराय

इस पत्र से जो बातें स्पष्ट होती हैं वे इस प्रकार है :—

प्रेमचन्दजी को ग्रामवासियों से अति लगाव था। वे शहर में रहते हुए भी ग्राम में रहने के हीं स्वप्न देखा करते थे—एक लेखक के रूप में। वे अपना समय ग्रामवासियों के बीच रह कर ही व्यतीत करना चाहते थे। क्योंकि वे स्वयं शहर के जीवन से ऊब गए थे। और इसी कारण उनकी जो अधिकांश रचनाएँ हैं वे ग्राम एवं ग्रामवासियों के विषय में ही लिखी गईं हैं। यह सब उनका ग्रामभ्राताओं के प्रति स्नेह का द्योतक है।

दूसरी बात जो इस पत्र से स्पष्ट है वह पं० श्रीराम शर्माजी के प्रति उनका स्नेह एवं आदर भाव है। प्रेमचन्दजी के समान ही पं० श्रीराम शर्मा भी ग्रामवासी थे अतः प्रेमचन्दजी का ख्याल था कि पं० श्रीराम शर्माही अपनी दुःखी गाँवों की जनता के विषय में अच्छी तरह अपना मत प्रकट कर सकते हैं। प्रेमचन्दजी ने अपने मन के भाव तथा उदगार इस पत्र में प्रकट किए है। शर्माजी के ग्रामीण-जीवन सम्बन्धी रेखाचित्रों में ग़रीब किसान का जो यथातथ्य चित्र हुआ करता था उससे प्रेमचन्द जी प्रभावित थे। इन रेखाचित्रों का आगे चल कर 'बोलती प्रतिमा' में संकलन किया गया था।

शर्माजी तथा प्रेमचन्दजी दोनों ही प्रसिद्ध पत्रकार (सम्पादक) थे, अतएव एक दूसरे के जीवन की कठिनाइयों से पूर्ण रूपेण परिचित थे।

'हंस' के प्रकाशन के मार्ग में तपस्वी पत्रकार प्रेमचन्दजी क्या-क्या कष्ट भोग रहे थे इसका संकेत भी इस पत्र में है।

प्रसिद्ध उपन्यासकार पर्लबक तथा ब्रिटेन कीलेबर पार्टी के एम० पी० तथा संसार प्रसिद्ध पत्रकार एच० एन० ब्रेल्सफोर्ड कई बार भारत आये थे और दो तीन बार शर्माजी के गाँव में ठहरे थे। ब्रेल्सफोर्ड ने शर्माजी से विदेशी अखबारों में भारत के विषय में लिखने का आग्रह किया था। प्रेमचन्दजी ने इस बात का जिक्र करते हुए इस पत्र में लिखा है कि शर्माजी से अधिक तत्कालीन भारत की अवस्था पर लिखने का अन्य कोई अधिकारी नहीं था।

प्रेमचन्द के पास शर्माजी ने अपनी एक पुस्तक (भारतीय जंगली जीवों पर) की पाण्डुलिपि भी भेजी थी जिस पर उत्साहवर्धक सम्मति प्रेमचन्द जी ने इस पत्र में दी है।

पत्र में प्रेमचन्दजी ने शर्माजी के जीवन की संघर्ष-जन्य कटुता के प्रति सहानुभूति प्रकट की है तथा लिखा है कि उनका अपना जीवन भी चूँकि पीड़ा से भरा है इसलिए वे लेखक के जीवन की कटुताओं को समझ सकते हैं। दोनों लेखकों को पेट के रोग थे इसके संकेत भी पत्र में हैं।

इस पत्र की विशेषता है कि इसमें जहाँ प्रेमचन्दजी के व्यक्तित्व तथा जीवनदर्शन का हमें परिचय मिलता है वहाँ शर्माजी के व्यक्तित्व तथा प्रेमचन्दजी के उनके विषय में जो विचार थे—वे भी प्राप्त होते हैं। मेरे विचार से यह एक महत्वपूर्ण पत्र है जो कि अब तक कहीं भी प्रकाशित नहीं हुआ है। 'हंस' के लेटर-फार्म (तथा लिफाफे) पर लिखा हुआ यह पत्र प्रेमचन्द जी ने लखनऊ से लिखा था इसलिए 'सरस्वती प्रेस काशी' काट दिया गया है। पत्र तथा लिफाफे की फोटो-प्रतिलिपि इस लेख के साथ छापी जा रही है।

+ ⌣ + ⌣ +
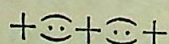
पुरुष से प्रश्न करिए, उत्तर मिलेगा। नारी से प्रश्न करिए तो या तो एक और प्रश्न उत्पन्न होगा या ऐसा उत्तर मिलेगा जो स्वयं एक प्रश्न होगा।

—सम्पादक

सन्नाटा

डा० रमेशकुमार शर्मा

**

पागल कुत्तों की तरह झूमते
चीड़ के पेड़
शैतान हवा पर भौंके
.......चुप हो रहे ।

अनगिनती मालाएँ टूटीं
.......दीप बुझे ।

सरिता-तट के पखेरू
एक एक करके
पुकारों के पंख फैला कर
पार चले गए
.......सन्नाटा छा गया ।

अन्धेरे में भटकतीं असीसें
देने वाले के पास
.......चुपचाप लौट आईं ।

कुछ कंकाल
रोज़, बड़े सवेरे
मेरा द्वार खटखटा कर
अट्टहास करते हुए
.......भाग जाते हैं ।

सरस्वती आज

पूतना बन गई है,
उसने मनमोहन क्षणों के स्वाद
विषाक्त किए हैं।
उन कडुए क्षणों के इंगितों पर
विडम्बनाओं के भीम
मेरी आत्मा के
जरासन्धी जोड़ों को
······चटखा रहे हैं।

चिपचिपे, रिसते अन्धकार में
किन्ही कदमों की धड़कन
दूर होती चली जाती है
फिर सन्नाटा छा जाता है
······घनघोर सन्नाटा।

+⩇+⩇+
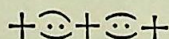
नबाब साहब : म्याँ, खोजा साहब, बेंगन बेहद भद्दा होता है।
खोजाजी : जीहाँ जनाब, इसीलिए उसे बे-गुन कहते हैं और उसका रंग खुदा ने कैसा काला-कलूटा बनाया है।
नबाब साहब : मगर उससे भुर्त्ता बड़ा लज़ीला बनता है।
खोजाजी : सो तो है ही हुज़ूर, इसीलिए उसके सर पर खुदा ने ताज रखा है, वड़ी महबूब चीज़ है बेंगन।
खाँ साहब : खोजा साहब, ये भी कोई वात हुई ? एक साँस में बेंगन की बुराई करते हो तो, दूसरी में उसकी तारीफ !
खोजाजी : यार खाँ साहब, तुम तो निरे बूदम-बेदाल हो। हम हज़ूर नबाब साहब के नौकर हैं या उस ससुरे बेंगन के !

त्रिलोकीनाथ गंजू
एच० एच० एच० एस०, एम० ए०
अनुसंधित्सु एवं प्राध्यापक हिन्दी-विभाग
कश्मीर विश्वविद्यालय

**

"कश्मीरी भाषा के सर्वनाम"

भारत के प्राचीन भाषा व्याख्याकारों, ने प्रतिशाख्य तथा निरुक्त आदि ग्रन्थों में समस्त पदों को चार खण्डों में विभाजित किया है। ये खण्ड हैं:— नाम, आख्यात उपसर्ग एवं निपात। नाम खण्ड में संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, और संख्यावाचक शब्दों को संग्रहीत किया है। संज्ञा वाचक एवं विशेषण शब्दों में मौलिकतः कोई विशेष भेद नहीं माना है। परं सर्वनाम और संख्या-वाचक शब्दों का पृथक् महत्व है। भाषा में सर्वनाम का महत्व प्राचीन आचार्यों को अवगत था। यद्यपि यह बात विवादास्पद है कि संज्ञा और सर्वनामों में विशेष भेद है और सर्वनामों के रूप निर्माण के मूल में अनेक प्रातिपादिक स्वीकृत किए गये हैं। श्री पाणिनि के पूर्वतर ग्रन्थ निरुक्त, "अथर्वप्रातिशाख्य" तथा "अपस्तंबधर्मसूत्र"[1] के आचार्यों ने अपने उक्त ग्रन्थों में सर्वनामन् संज्ञा का उल्लेख किया है। अपस्तंबधर्मसूत्र ने नामन् और सर्वनामन् दोनों का उल्लेख एक ही सूत्र में किया है। महाभाष्यकार पतंज्जलि ने :—"अन्वर्थग्रहणं तत्र विज्ञास्यते, सर्वेषा यन्नाम तत्सर्वनाम" "अर्थात् जो सब का नामन् है वही सर्वनाम है। समाज-शास्त्रीय दृष्टि से यदि इसकी व्याख्या की जाए तो बहुत सी बातें स्पष्ट हो जाती हैं। संज्ञा का व्यक्तिवाचक रूप ही अधिकतः बहुप्रचलित है। इसका कलेवर, रूप एवं आकार इतिहास के उत्थान-पतन से बदलता रहता है।" पर सर्वनामों की

---

१. डा० सूर्यकान्त सम्पादित।

चिरन्तनता एवं उसका सर्वकालीय प्रयोग बना रहता है। यही कारण है वेदान्त में अक्षर के उपरान्त सर्वनाम का महत्व अधिक स्वीकृत माना है यथा :—"सोऽहम्" ।

कश्मीर के इतिहास में आज से आठ सौ वर्ष पूर्व जो बहुप्रचलित व्यक्ति-वाचक संज्ञाएँ रहीं होंगी। वे धर्म परिवर्तन से आज वैसी नहीं रहीं। धर्म परिवर्तन के कारण नवीन व्यक्ति वाचक संज्ञाओं ने स्थान लिया पर सर्व-कालीय सर्वनाम अब भी अपना अक्षुण्ण संस्कार लिए बैठे हैं :—

सुअ् राम (वह राम)
सुअ् करीम[1] (वह करीम)

"राम भारोपीय शब्द है और करीम सेमेटिक भाषा परिवार का है। दोनों में ध्रुवीय अन्तर है। पर दोनों में सुअ्→संस्कृत→"सः" प्राकृतः सो→सु, किसी भी परिवर्तन के बिना सन्निहित है। इसी प्रकार ईरान, ग्रीक, जर्मन, इटली तथा बाल्टो-स्लैवोनिक देशों में कितने असंख्य ऐतिहासिक उत्थान-पतन आए। कितने ही धर्मों ने अपना प्रभुत्व स्थापित किया। धार्मिक आक्रमणों के साथ उनकी आदिम व्यक्तिवाचक संज्ञाएँ बनती-बिगड़ती रहीं, पर सर्वकालीय सर्वनामों की अमिट छाप अभी भी उन में विद्यमान है।

वस्तुतः तुलनात्मक भाषा-विज्ञान के अध्ययन के लिए सर्वनाम एक अचूक कड़ी है। जो भिन्न-भिन्न भाषाओं के उद्‌गम को स्पष्ट करते हैं। यही सत्ता संख्यावाचक सर्वनाम की भी है। इसी महत्व के फलस्वरूप प्राचीन आचार्यों ने सर्वनाम और संख्यावाचक को मुख्य विशेषता दी है।

संस्कृतः→माम्[2], आवेस्ताः→माम्, ग्रीकः→मी, लैटिनः→मी, गोथिकः→मिक्, बलगेरियनः→मिनी, कश्मीरी→म्य।

कश्मीरी भाषा में सर्वनामों को निस्संदेह इतिहास के क्रूर प्रहारों के युगों से गुज़रना पड़ा है। कश्मीर का भूभाग भारतीय संस्कृति-सभ्यता एवं भाषा का एक अविभाज्य अंग होने के उपरान्त भी अपनी भौगोलिक सीमा के कारण अलगथलग ही रहा है। इसमें यातायात का मुख्य काठिन्य रहा है। कश्मीरी-भाषा के सर्वनाम यथार्थ में अध्ययन के योग्य हैं। इसमें अभी भी वैदिक सर्वनाम यथा "नेम" का प्रयोग जन-भाषा में चलता है, जो

---

१. करीम अरबी शब्द है और करीमा फारसी "हिन्दुस्तानी कोष"।
२. डा० पी० डी. गुणे : तुलनात्मक भाषा-विज्ञान।

भारत में अप्राप्य है। इसी प्रकार उच्चतर संस्कृत के अन्य सर्वनाम मूल-स्रोत से छूटकर भी अपने विस्तृत प्राकृत-परिवार—शौरसेनी, मागधी, अर्ध-मागधी तथा अपभ्रंश आदि भाषा-भाषियों के साथ हमराही बन कर विकास-शील (भाषा-वैज्ञानिक दृष्टि से) होकर आगे बढ़े हैं। यद्यपि स्थानीय भू-सीमा के कारण किंचित तोड़-मरोड़ का आना स्वाभाविक था। अभी भी इस आदिम मूलस्रोत का आभास इसमें विद्यमान है जो दरदीय परिवार में उपलब्ध नहीं है। शीना भाषा में सम्बन्ध-वाचक एवं अनिश्चयवाचक सर्वनाम है ही नहीं। प्रश्नवाचक सर्वनाम से ही इसका कार्य-व्यापार किया जाता है। शीना के शेष सर्वनामों के भेदों में कश्मीरी भाषा के सर्वनामों का सा रूप नहीं मिलता है। और रूप-रचना में प्राकृत भाषा के विभक्ति प्रत्ययान्त भी कश्मीरी भाषा के समान नहीं है। फ्रैंच विद्वान् ज़्यूल ब्लाख अपनी "पुस्तकॅल' आँन्दो' एरियाँ" में कश्मीरी की शीना या पोगली से समानता करते हुए कश्मीरी के विचित्र स्वभाव का उल्लेख कर चुके हैं। इसी प्रकार का उल्लेख श्री ग्राहम बिले ने अपनी पुस्तक "शीना भाषा का व्याकरण" में किया। उनका दावा है कि शीना भाषा का उनका व्याकरण शीना का वास्तविक व्याकरण है क्योंकि वह गिलगित (शीना भाषा-भाषी प्रदेश) में जन्मे भी है और प्रौढ़ भी हुए। अतः शीना भाषा उनके लिए मातृ-भाषा के समान ही है, जब कि अन्य यूरोपीय लेखक—बिडुलफ (हिन्दु-कुश के परगने) लिस्टन (दरदिस्तान) ग्रियर्सन (पैशाची व्याकरण, तथा भार-तीय भाषा सर्वेक्षण ८, खण्ड-२) और विलसन (शीना की गुरेस विभाषा) अपनी प्रौढ़ास्था में शीना भू-भाग में आए और प्रथम बार इस प्रकार की ध्वनियों का श्रवण किया, और उसी सुनी-अधसुनी ध्वनियों को ग्रहण करके अल्पावधि में ही लौट आए। श्री ग्राहम बिले स्वयं अपने "शीना भाषा व्याकरण', में स्वीकार करते हैं, कि कश्मीरी भाषा इससे नितान्त भिन्न है, और ध्वनि प्रयोग में भी विशेष कोई साम्य नहीं है। वह तो यह भी स्वी-कार करते हैं। कि कश्मीरी[३] सर्वनामों का प्रभाव शीना सर्वनामों पर

---

१. ग्राहम बिले : शीना-व्याकरण।

२. ज्यूल ब्लाख : भारतीय आर्य-भाषा : अनु० डा० वार्ष्णेय, पृ० ३२६।

३. ग्राहम बिले : शीना व्याकरण, पृ० २२ तथा ६२।

अवश्य पड़ा है।[१] वास्तव में ग्रियर्सन का कश्मीरी एवं शीना भाषा का शोध मात्र सतही है। ग्रियर्सन की मान्यता है, कि इस देश का नाम काश्मीरिका[२] है जब कि नील[३] मुनि ने "काश्मीर+आख्यों "कश्मीर इस नाम से' इस देश का नामकरण पूर्वतः ही वर्णित किया है। श्रीकल्हण ने राजतरंगिणी में स्पष्टतः कश्मीर शब्द का उल्लेख किया है।

"कश्यपेन तदन्तस्थं घातयित्वा जलोद्भवम्।
निर्ममे तत्सरो भूमौ कश्मीर इतिमण्डलम्॥

—प्रथम तरंग : श्लोक २७

ग्रियर्सन[४] का यह तर्क निराधार है कि इस देश का नाम "काश्मीरिका" था। यह तर्क देते हैं कि भारतीय प्राकृतों में "श्म" "श" में स्थानान्तरित नहीं होता है। जब कि कश्मीर के स्थानीय लोग कश्मीर को "कशीर" और भाषा को "कअ्शुर" कहते हैं। अतः "श्म' का "श" में स्थानान्तरित होना दरद भाषा का होना सजीव प्रमाण है। कश्मीर में प्रायः "श" और "म" के सन्निकर्ष में म का लोप होता है जिस तथ्य से ग्रियर्सन अपरिचित थे। यथा :—

वैदिक संस्कृतः—शामूल.(ऊनी वस्त्र) कश्म०:—शाल हि० शाल (दुपट्टा) इसी प्रकार से "कश्मीर" देश वाचक शब्द में "श" के सान्निध्य से "म" का लोप हुआ। कश्मीर में दीर्घस्वर युक्त मध्य व्यंजन का लोप प्रायः होता है।

सं०:—कपाल (सिर) कश्म०:—"कल"
सं०:—कुमारी (कन्या) कश्म०:—कूर

इस प्रकार के अस्थिर उपादानों को लेकर किसी भाषा का विवेचन नहीं होता है, और न उसका कलेवर ही स्पष्ट ही होता है।

सर्वनामों की व्युत्पत्ति के विवेचन से भाषा-विज्ञान के आचार्य एवं विद्यार्थी स्वयं निर्णय कर सकेंगे, कि कश्मीरी-भाषा भारतीय संस्कृत तथा

---

१. सम्भवतः यह प्रभाव कश्मीर के 'चक्क' वंश के समय में पड़ा हो, जिनका राज्य कश्मीर में ई० १५८५ तक रहा। चक्क वंश दरदिस्तान के थे। इनका राज्य शीना-भू-भाग से कश्मीर तक फैला था। जोनराज तथा श्रीवर "राजतरंगिणी"।

२. भाषा सर्वेक्षण—भाग, ८ खण्ड-२।

३. नीलमत पुराण—श्लोक, २६१-२६२।

४. ग्रियर्सन : भाषा सर्वेक्षण, पृ० २३३।

प्राकृत भाषा के समीप ठहरती है, या ईरानी यायावर परिवार (जिसे दरद कहते हैं) के निकट ठहरती है। मैं इस विषय में तटस्थ एवं निष्पक्ष न्याय का इच्छुक हूँ।[१]

पुरुषवाचक सर्वनाम

सामान्यत: कश्मीरी भाषा में भी पुरुष-वाचक सर्वनाम के तीन भेद हैं :—

	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	बअ् (मैं)	अ्स्य (हम)
मध्यम पुरुष	च़अ् (तू)	त्व्य्य त्व्हय् (तुम)
अन्य पुरुष	सुअ् (वह)	तिअ्म् (वे)

व्युत्पत्ति

कश्म० बअ् की व्युत्पत्ति के सम्बंन्ध में प्रथमत: "भवत्" के अग्रिम "भ" का आभास होता है। पर कश्मीर में इस शब्द का प्रयोग अत्यल्प है, और आदर वाचक शब्द भी "कश्मीरी भाषा" में यह नहीं है। कश्मीरी व्याकरण में इस प्रकार का कोई प्रायोगिक रूप उपलब्ध नहीं है। अत: कश्मीरी भाषा का "बअ" वास्तव में वैदिक "स्व"[२] उत्तम पुरुषवाची है और भाषाशास्त्रीय दृष्टि से कश्मीरी "बअ्" की व्युत्पत्ति इस से सम्भव भी है :—कश्मीरी भाषा में हलन्त अग्रिम "स"[३] प्राय: लुप्त होता है। यथा : संस्कृत :→स्फोरण। कश्मीरी :→फौरुण। संस्कृत :→स्फोट। कश्मीरी:-फोट। कश्मीरी भाषा में "व" अधिकतर अन्य आर्य भाषाओं के समान ही "ब"[४] ध्वनि में विपर्यय होता है यथा : बिष्ट→बिष्ट····बिह[५]····कश्मीरी

---

१. इस विषय पर प्राप्त सम्मतियों को 'वितस्ता' में प्रकाशित किया जायगा-—सम्पादक।

२. वैदिक व्याकरण।

३. कश्मीरेतर आर्य भाषाओं में भी अग्रिम हलन्त "स" का लोप होता है।
हिन्दी :—फडक→स्फरण, फूट→स्फोट।

४. कन्नौजी—वह "बह" धातु बहु—बहि वै "ते" (बैठो)
बंगला :—अरूविन्दु→अरूबिन्दु।

५. कश्मीरी में भी अन्य प्राकृतों के समान ही "श" का विपर्यय "ह" में होता है। दुर्गाचार्य "रिष्टसमुच्य" पृष्ठ १४ "ता जीवइ दह दिवसे।"

→"बए्ह" (बैठो)। अतः वैदिक[1] "स्व"→व→कश्मीरी :—"बअ[2]"

कश्मीरी—"अस्य" (हमें) कश्मीरी उत्तम पुरुष बहुवचन।

व्युत्पति :—सं०:—अस्मान्→अस्मा[3]→अस्सा→इदम् की षष्टी वि० एक० व० की सादृश्यता पर "अस्य" "अइस्य"। पंजाबी :—"असी"। उच्चारण के समय सीत्कार की ध्वनि निकलती है।

कश्म०—"च़अ् (तू) कश्मीरी मध्यम पुरुष एकवचन इसका प्रयोग अपने से छोटे एवं असभ्यों से किया जाता है। पर सभ्यता की दृष्टि से इसका प्रयोग अभद्र ही समझा जाता है। अतः इस के बदले "तुए" "तुय्ये"[4] "तओ्हय" का प्रयोग अधिक सभ्य समझा जाता है। वैसे भी इसका प्रयोग ज्येष्ठ और श्रेष्ठों के साथ होता है।

व्युत्पत्ति :—"युष्मद्" प्रथमा वि० एक० व०। सं० :→त्वं→त्व→च्व[5]→→चअ्→च़अ्[6]। पर यदि यह स्वीकार किया जाए कि इसकी व्युत्पत्ति वैदिक "तु" से हुई है। तो विकास के सोपान इस प्रकार बनते हैं।

---

१. वैदिक व्याकरण।

२. प्राकृत परिवार में "अस्मद्" प्रथमा विभक्ति बहुवचन के रूप—"अम्ह, अम्हे, अम्हो वय तथा "भे" है। बहुतों का यह भी अनुमान है कि प्राकृत "भे" से ही कश्मीरी→→"बअ" की व्युत्पति सम्भव है। कष्टवारी कश्मीरी भाषा-भाषी उत्तम पुरुष एक वचन का प्रयोग "भोऽह→भाहं→भअ् इन रूपों में करते हैं। कश्मीरी में "ह" और "अ" में अतः विषर्यय है।

३. मोग्गल्लान व्याकरण सूत्रः संख्या २०५, २११, काण्ड—२।

४. "सुम्हा (वह) स्सा स्मा स्स" इस प्रकार के आदेश परस्पर विपर्यय होते हैं। "तुम्हें" अथवा "तुय्ये" मागधी रूप। आर. पिशाल—प्राकृत भाषाओं का व्याकरण।

५. कश्मीरी प्राकृत में तवर्ग प्रायः चवर्ग में स्थानान्तरित होता है। अन्य प्राकृतों में भी यह विपर्यय है। कश्मीरी भाषा में इसका प्रयोग १०वीं शती के कश्मीरी प्राकृत लेखक शतिकण्ठ ने अपने दार्शनिक ग्रन्थ "महानय प्रकाश" में "त्व" के स्थान पर "च" का प्रयोग किया है—जानु चे निष्कलु"—अध्याय—२ पृष्ठ, २६।
(क) च्वो वृजित्योरिति "च्चौ आदेशः—प्राकृत प्रकाश पृ०, २०६।
(ख) णच्व—ज्ञत्व "कुमार पाल चरित्र" पृ०, ५।
(ग) णच्वक—नृत "व्यवहार सूत्र भाष"।
(घ) मागधी में भी "त" का "च" होता है—तिष्ठ—चिष्ठ।

६. "च़अ्" और चअ़ स्त्रीलिंग पुं० लि० क्रमशः स्त्रीलिंग में अघोष अल्प-प्राण दन्त-मूलीय् स्पर्श संद्घर्षी के अतिरिक्त मुख के दक्षिण कोण में विस्फार एवं सीत्कार होता है

वैं० :—तु→चु→च्व→चअ→च़अ्[1] ।

कश्म० "तुह्‌य" (तुम्हें) :—म० पु०, इस शब्द की व्युत्पत्ति सं० "युष्मद्" के द्वितीया बहु० व० युष्मान से हुई है । विभिन्न प्राकृतों में संस्कृत "युष्मानं" के रूप इस प्रकार से मिलते हैं :—

तुज्झ, तुज्झे, तुहये, तुय्हे ।

श्री हार्नली के अनुकरण पर वैदिक "तुष्मे" शब्द की कल्पना पर ही इसकी व्युत्पत्ति सम्भव है ।

प्राकृतः—"तुहये" से कश्मीरी "तुहय" की समानता स्पष्ट है ।

वैदिक :—"तुष्मे→तुहमे[2]→तुह्‌ए[3]→कश्मीरीः→तुहय ।

कश्म०—"सुअ" (वह) कश्मीरी अन्य पुरुष प्रथमा वि० एक व० ।

व्युत्पत्तिः—सः→सउ्[4]→सु, सुअ् । प्राचीन हिन्दी→"सो"

कश्म०—"तिअ्म" (वे) कश्मीरी अन्य पुरुष बहु० व० । कश्मीरी प्राकृत में अन्य पुरुष बहु व० दो भिन्न सर्वनामों के मेल से बनता है→"तद्" प्रथमा वि० बहु० व० तथा "इदम्" प्रथमा वि० एक० व० ।

"ते" "इमे"→तअ्+इमे→तिअ्मे→तिअ्म् ।

विशेष :—अन्य पुरुष एकवचन तथा बहुवचन में दो विकल्प रूप कश्मीरी भाषा में और भी मिलते हैं ।

	एकवचन	**बहुबचन**
	हुअ् (सः) (वह)	हुमअ् (वे)
तिर्यक :—	तिअ् (वह)	तिअ्म (वे)

---

१. "च़" निम्न बिन्दी युक्त च़ का संकेत इसके उच्चारण से है वास्तव में कश्मीरी वर्णमाला पर गत छह शतकों से फारसी का प्रभाव रहा है । अतः इसका उच्चारण उर्दू "च़अ्" के सादृश्य पर होता है ।

२. कश्मीरी प्राकृत में अन्य प्राकृतों के समान ही "ष" और "श" का "ह" में विपर्यय होता है । "अभिनव प्राकृत व्याकरण"—नेमिचन्द ।

३. शकुन्तला और रत्नावली में "तए" रूप चलते हैं । मागधी में भी "तए" रूप चलता है शीघ्रता के कारण कभी-कभी कश्मीरी प्रयोग भी इसी प्रकार का होता है ।—आर पिशालः "प्राकृत भाषाओं का व्याकरण" : पृ, ३१८ ।

४. "विसर्गस्य सः सस्यरुत्वम् "उ" अवशेष रहता है विसर्ग-सन्धि "सि० कौ० ।"

५. "सुअ" का प्रयोग सः के समान ही है कश्मीरी प्राकृत में भी "स" का "ह" में स्थानान्तरित होना अन्य प्राकृतों के समान ही है "अभिनव प्राकृत व्याकरण ।"

आगे के पृष्ठों में "हुअ" की रूप रचना में इसकी व्युत्पत्ति के विषय-वर्णन करेंगे।

"तिअ्" का स्वरूप प्राकृत के समान ही है।

कश्म० "तिम" (वे) की व्युत्पत्ति अन्य पुरुष बहुवचन के समान ही है, जिसकी व्युत्पत्ति दी गई है।

सम्प्रदान और अपादान में उत्तम पुरुष एक० व० का रूप कश्मीरी में "मेअ्" अथवा "म्यअ्" (मुझे) है। इसकी व्युत्पत्ति "असमद" शब्द के चतुर्थी विभक्ति के एकवचन के निघाता देश "में" समान ही है।

सं०—मे[२] → म्‌ए → म्य → कश्मीरी :—म्यअ्

उत्तम पुरुष, मध्य पुरुष और अन्य पुरुष के एक वचन और बहुवचन के उपरान्त अब इनके अन्य रूपों:—सम्प्रदान्, अपादान और सम्बन्ध कारकों के रूपों की व्युत्पत्ति पर विचार करेंगे।

,,सुअ" अन्य पुरुष के विभक्ति रूप :—

	एकवचन	**बहुवचन**
१—सम्प्रदानः	तअ्मिस् (उसे)	तिमन् (उन्हें, उनके लिए)
२—आपादानः	तअमय (उससे)	तिमव् (उनसे)
३—सम्बन्धः	तअ्म्य सुन्द (उसको)	तिमन्हुन्द (उनको)

कश्मीरी :—"तअ्मिस" (उसे) सम्प्रदान, अन्य पुरुष एकवचन संकेत वाचक स०।

व्युत्पत्ति :—कश्मीरी में इसका अग्र व्यंजन "त" "तद्" का अग्रिम शेष है और "अमिस्स" "इदम्" का प्राकृत सम्प्रदान कारक रूप "इमस्स" के सादृश्य पर युगल संयुक्त रूप का निर्माण हुआ है :—

सं० → तद् → त, स० → इदम् चतुर्थी वि० "अस्मे" प्राकृत भाषा चतुर्थी इमस्स।

त[३] + इमस्स[४]—तइमस्स—तमिस्स—तअ्मिस्स—कश्मीरी :—

---

१. प्राकृतों के वर्ण परिवर्तन में "ए" ध्वनि "इ" ध्वनि में स्थानान्तरित होती है—"अभिनव प्राकृत व्याकरण", पृ, १०५।

२. भारतीय अन्य प्राकृतों में भी इसका रूप—मे, मह, मह, मय, मम्हे, अम्ह, अम्ह, बनते हैं।

३. आर, पिशाल: प्राकृत भाषाओं का व्याकरण।

४. नेमिचन्द्र शास्त्री: प्राकृत व्याकरण।

तअ्मिस्। इसी प्रकार के सादृश्य के फलस्वरूप चतुर्थी विभक्ति बहुवचन का रूप बना है :—

कश्म०—'तिमन्' चतुर्थी वि० बहु व० सं→"एतद्→"तेम्यः" प्राकृत→"तत" "ताह" 'तेहिं' 'ताण' पर यहाँ "तद" का अग्रिम त अवशेष और प्राकृत का "इमाण" इन दो युगलों से "तिमन" क०—की उत्पति हुई है।

ते+इमान[1]→तिमान→तिमअन्→तिमअ्न→कश्मीरी :—

तिमन् (उन्हें)

उपर्युक्त रूप का विकल्प भी कश्मीरी भाषा में प्रयुक्त होता है :—

"तअस्स" (उसके लिए) प्राकृत भाषा की रूप रचना में "तत" का चतुर्थी विभक्ति एक वचन "तस्स" कश्मीरी "तअस्स"[2] के समान ही है।

व्युत्पत्तिः—"तअम्य" कश्मीरी पंचमी विभक्ति एकवचन, संस्कृत "तद" पंचमी विभक्ति एकवचन एवं "इदम" पंचमी विभक्ति एकवचन। इन दो सर्वनामों के संयोग से इसका निर्माण हुआ है।

प्राकृत[3] भाषा में त् या तत् पंचमी विभक्ति एकवचन→तो, तम्हा और इदम→इम का पंचमी विभक्ति एकवचन→"इमतो", "इमाओ", "इमा", है :—

त+इमा→तइमा→तअ्मा→तअ्मए→तअम्ए कश्मीरी तअ्म्य

तिमव कश्मीरी पंचमी विभक्ति बहुवचन संकेत वाची अन्य पेक्षी।

व्युत्पत्तिः—प्राकृत 'तत्' पंचमी विभक्ति बहु वचन "तेहि" तथा प्राकृत इम् पंचमी विभत्ति बहुवचन के संयोग से इसका रूप बना है:—

तेहि[4]+इमउ→तिहइ्मउ→कश्मीरी→ग्रामत्व प्रयोग→तिअ्मउ[5]

कश्मीरी नागरिक—तिमव्।

एकवचन	**बहुवचन**
"तम्यसुन्द" (उसका)	तिमन्हुन्द (उनको)

---

१. ....वही, ...चतुर्थी विभक्ति बहुवचन।

२. आर, पिशालः प्राकृत भाषाओं का व्याकरणः, पृ० ६१६।

३. नेमिचन्द्र शास्त्री; अभिनव प्राकृत व्याकरण; प्राकृत वर्ण परिवर्तन में "इ" ध्वनि अ में, और आ ध्वनि "ए" में स्थानान्तरित होती है।

४. कश्मीरी में "उ" मात्रा "व" में स्थानातरित होती है यथा :— उमा—कश्मीरी→वमा; उस्ताद—कश्मीरी वस्ताद

५. मोग्गल्लान व्याकरण—ङ्से रा-दो-दुहि, सूत्र सं०—६ परि० ६।

व्युत्पत्ति :—"तम्यसुन्द" कश्मीरी षष्ठी विभक्ति एकवचन। इसमें "सुन्द" प्रत्यान्त प्राकृत भाषा पंचमी विभक्ति का है।

विभिन्न प्राकृतों में यह प्रत्यान्त इस प्रकार से है :—

	एकवचन	**बहुवचन**
१—शोरसेनी[१]	आद्, आदु	त्तो हिन्दो सुन्तो हि
२—मागधी[२]	हो दु	त्तो, ओ, उ, हिन्दो शुन्दो
३—अर्धमागधी[३]	ओ आत्तो	इहितो
४—अपभ्रंश[४]	हो, हु, हे	हिन्तो सुन्तो

कश्मीरी तम्यसुन्द (उसका) संस्कृत तद तत् प्राकृत पंचमी विभत्ति "तम्हा" मागधीःप्रत्ययान्त शुन्द→सुन्दो→सुन्द; कश्मीरी "सुन्द" तम्हा+सुन्द—प्राकृत "इमा के सादृश्य-रूपता से पंचमी विभक्तिः—तम्य+सुन्द—कश्मीरी—तम्यसुन्द।

विशेष :—"तम्हसुन्द" उसका यह प्रयोग अभी भी कश्मीरी भाषा में दक्षिण पूर्वी (मराज ज़िला) और उत्तर पश्चिमी (कमराज ज़िला) भूभाग में सजीव है।

कश्म०:—"तिमन्हुन्द" (उनको)

व्युत्पत्ति :—कश्मीरी "तिमन्हुन्द" (उनको) षष्ठी विभक्ति बहु० ब० है। परं प्राक्रत भाषा में यह पंचमी विभक्ति एक० व० एवं० बहु व०, दोनों का रूप है।

प्राक्रत पंचमी एवं षष्ठी को कश्मीरी प्राक्रत में एक ही विभक्ति का रूपादेश माना है।

पूर्वोक्त चतुर्थी वि० बहु० व० "तिमन"→ते+इमान+तिअ्मन को शौरसेनी पंचमी वि० प्रत्ययान्त "हिन्तो" के संयोग से :-

तिमन+हिन्तो→तिमहुन्तो→तिमन्हुन्दो[५]→कश्म० :—तिमन्हुन्द[६]

---

१. वही, ङसेरान्तो, दो दुहि, हितो सूत्र सं०—८ परि०६।
२. वही, म्यासो हिन्तो सन्तो सूत्र सं—७।
३. वही, म्यस त्तो दो दुहि हिन्तो सूत्र सं०—६।
४. नेमिचन्द शास्त्री—"अभिनव प्राकृत व्याकरण; "ए" ध्वनि का "इ" "इ" ध्वनि का "उ"।
५. "द" के सादृश्य से "ह" में न आगम :—"न्हा"।

विशेष :—कश्मीरी भाषा में षष्ठी एक० व० और बहु० व० विकल्प रूप भी मिलता है।

	एकवचन	**बहुवचन**
षष्ठी वि०	तम्यसुन्द	तिमन्हुन्द

उपर्युक्त वैकल्पिक रूप कश्मीरी भाषा में षष्ठी विभक्ति बोधक है। पर प्राकृत में पंचमी विभक्ति बोधक ही है। पर इनका प्रयोग शुद्ध प्राकृत के समान ही है :—

प्राकृत :—तासुन्तो[1]..........कश्म०:—तअसुन्द

प्राकृत :—तिहुन्द[2]............कश्म०:—तिहुन्द

विशेष :—कश्मीरी न० लिंग के चतुर्थी एकवचन में इसका रूप इस प्रकार है :—"तत्थ् या तथ्"

वास्तव में यह प्राकृत "तद्" के सप्तमी विभक्ति एकवचन के ये रूप हैं:—"ताहे[3], ताहि, तम्यि, तस्सि, तत्थ"

कश्मीरी न० लिंग "तम्युक षष्ठी विभक्ति बहुवचन की व्युत्पत्ति इस प्रकार से है :—

प्राकृत "तत" का सप्तमी विभक्ति एकवचन "तिम्म" अपभ्रंश "किम" का पंचमी विभक्ति एकवचन "कउ" के संयोग से इसकी रूप रचना हुई है। यथा :—तम्मि→कउ→तम्यिकउ→तम्यिकअ् कश्मीरी→तम्यिक शेष सब लिंगों की रूप रचना समान है।

संकेतवाचक सर्वनाम :—

कश्मीरी प्राकृत में संकेत वाचक सर्वनाम के तीन रूप मिलते हैं जो प्रायः हिन्दी में अप्राप्त है। वास्तव में यह प्रथा काश्मीरी भाषा की जननी संस्कृत का अवशेष चिह्न है। संस्कृत में "इदम्" समीपस्थ वस्तु या व्यक्ति के लिए और अधिक समीपस्थ के लिए "एतद्" का प्रयोग होता है।

इदमस्तु सन्निकृष्टं समीपतरवर्तिचैतदोरूपम्।
असदस्तु विप्रकृष्टं तदिति परोक्षे विजानीयात्॥

"कारिका"

---

१. प्राकृत प्रकाश तथा मोग्गल्लान व्याकरण।

२. प्राकृत प्रकाश तथा मोग्गल्लान व्याकरण।

३. नेमिचन्द्र शास्त्री; अभिनव प्राकृत व्याकरण, पृ० १६८।

संकेत वाचक सर्वनामों के रूप :—

कश्मीरी "इह्"

	एकवचन	**बहुवचन**
प्रथमा वि०	इह् (अ्) (यह)	इअ्म् (यह)
चतुर्थी वि०	यम्मिस (इसके लिए)	इमत् (इन के लिए)
पंचमी वि०	इमअ् (इस से)	इमव् (इन से)
षष्ठी वि०	यम्यिसुन्द (इसका)	इमन्हुन्द् (इनका)

संस्कृत: एष→एह[1]→इह[2]→वैकल्पिक→इअ्[3]

विशेष :—इसका स्त्रीवाची रूप "इय्" कश्मीरी में है। वास्तव में यह संस्कृत "इदम्" स्त्रीलिंग एक वचन का ही रूप कश्मीरी में युगपत् चलता है।

इयम्→इय→कश्म०→इय।

कश्म० "इअ्म्" प्रथमा वि० बहुवचन संकेतवाचक सर्वनाम।

व्युत्पत्ति :—कश्म० "इअ्म्" का गठन "एतद्" से न होकर "इदम्" पुँ० लि० प्रथमा वि० बहु व० से हुई है।

सं०—इमे[4] →इअ्मे→इअ्मअ्→इअ्मअ्→क०—"इअ्म"→ (यह)।

	एकवचन	**बहुवचन**
चतुर्थी वि०	इमिस (इसके लिए)	इमअ्ण (इनके लिए)

व्युत्पत्ति :—प्राकृत "इम्" (इदम्) का रूप चतुर्थी वि० एकवचन और बहु-वचन स्पष्ट रूपेण कश्मीरी के समान ही है।

---

१. कश्मीरी में अन्य प्राकृतों के समान "ष" "श" का "ह" में विपर्यय होता है। सं०-शाक→क०—हाक; श्वान (कुत्ता) क०—हान→हून→हून।

२. प्राकृत-प्रकाश: 'ए' ध्वनि का "इ" में विपर्यय।

३. कश्मीरी प्राकृत में "ह" ध्वनि "अ" में स्थानान्तरित होती है। वास्तव में यह कश्मीरी प्राकृत की एक अपनी विशेषता है जिसके फलस्वरूप यह "दरदी" परि-वार से अलग होती है और अपना अस्तित्व नितान्त विभिन्न बनाती है, हस्त→अथ्→कश्म० 'अथअ' (हाथ)।

४. कश्मीरी प्राकृत में 'ए' और 'इ' 'ई' का कोई विशेष अन्तर नहीं है प्रायः 'ए' को इ ई के रूप में ही लिया जाता है सं०—रमेश कश्म०—रमीश। कालिदास→कअ्लीदास।

प्राकृत ए० व० :—इमस्स[१] कश्मीरी एकवचन :—इमिस्स्

प्राकृत बहुवचन :—इमाण[२] कश्मीरी बहुवचन :—इमण

	एकवचन	बहुवचन
कश्म० पंचमी वि०	इम	इमव

व्युत्पत्ति :—प्राकृत "इम" का पंचमी वि० एकवचन इमा[३]→इमआ→ इमअ→इमअ् कश्मीरी→इम ।

प्राकृत 'इम' का पंचमी वि० बहुवचन इमउ—इमव क०—इमव (कश्मीरी उच्चारण—"इमअ्व")

	एकवचन	बहुवचन
कश्मीरी षष्ठी वि०	इमिसुन्द (इसका)[४]	इमनहुन्द(इनका)
प्राकृत पंचमी वि०	इमाहिन्तो[५]	इमासुन्त[६]

वचन विपर्यय

	एकवचन	बहुवचन
प्राकृत पंचमी वि०	इमासुन्द[७]	इमासिन्तो[९]
कश्मीरी षष्ठी वि०	इमिसुन्द[८]	इमन्हुन्द[५]

विशेष :—स्त्रीलि० प्रथमा वि० बहुवचन का रूप, "इम्य" या "इमि" प्रयुक्त होता है। "इमि" कश्मीरी भाषा में बहुवचन का प्रयोग

---

१. आर पिशल : प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पृ०-६३८ ।

२. …वही ।…………

३. ध्वनि विकार…प्राकृत विमर्श ।

४. आर पिशल-प्राकृत—भाषाओं का व्याकरण, पृ० ६१४ ।
जैन महाराष्ट्रीय में "हिन्तो" "सुन्तो" प्रत्ययान्त पंचमी वि० में संलग्न होते हैं । पर कश्मीरी में यह प्रयोग षष्ठी में प्रयुक्त होता है ।

५. कश्मीरी में प्राकृत एकवचन और बहुवचन, बहुवचन और एकवचन में स्थानातरित होते हैं ।

६. प्राकृत वर्ण-परिवर्तन में "अ" ध्वनि "इ" ध्वनि में विपर्यय होती है । कश्मीरी में यह नियम अधिकांश रूप में आरूढ़ है ।

७. कश्मीर में "त" वर्ग के तृतीय में स्थानातरित होता है पाणिनि ।

८. कश्मीरी षष्ठी वि० बहु व० में "न्ह" का "न" प्रयोग आगम नहीं अपितु षष्ठी वि० बहु० व० इमाण का "न" अभी तक सुरक्षित है ।

९. वर्ण परिवर्तन में "ए" ध्वनि 'इ' कभी 'अ्' कभी इ के रूप में रहती है ।

है। पर यथार्थ में यह प्राकृत "इमो" 'इदम्' स्त्रीलिंग द्वितीय वि० एकवचन का स्पष्ट रूप है :—

प्राकृत द्वितीया वि० एकवचन :—"इमि" (ये)

कश्मीरी प्रथमा वि० बहुवचन :—"इमि" (य्मि) (ये स्त्रियाँ)

इसी प्रकार कश्मीरी भाषा में पंचमी वि० एक वचन का स्त्रीलिंग रूप "इमिइ" प्राकृत पंचमी विभक्ति वि० एक वचन स्त्रीलिंग का रूप "इमिए"[1] नपुंसक लि० में चतुर्थी एक वचन "युत्थ" या "युथ" और षष्टी एक व० में "यम्युक" है।

व्युत्पत्ति:—"युथ" वास्तव में संकेत वाचक न होकर सम्बन्ध वाचक है। पर कश्मीरी में संकेतवाची रूप में इसका प्रयोग है।

सं० :—यथा→यथ→युथ कश्म० :→"युथ"

"म्युक" की उत्पत्ति का स्वरूप आगे स्पष्ट किया जायगा।

कश्मीरी में किंचित् परवर्ती सर्वनाम के लिये "हुअ" (वह) का प्रयोग होता है। कश्मीरी व्याकरण में इसकी रूप-रचना में बड़ी विसंगति आई है। संभवतः यह प्राकृत और अपभ्रंश युग के संक्राति-काल में आई हो। कश्मीरी भाषा में "हुअ" (वह) वास्तव में"सुअ"का ही दूसरा रूप है। प्राकृत में सामान्यतयः सकार हकार में स्थानान्तरित होता है। पर रूप रचना में संस्कृत "अद्स" प्राकृत "अमु" का रूप संलग्न है। कारक चिह्न शौरसेनी प्राकृत के हैं। वास्तविकता यह है कि कश्मीरी भाषा के समस्त कारक चिह्न क्रम-अक्रम से शौरसेनी प्राकृत के सुबन्त-प्रत्यान्त से निर्मित हुए हैं। मात्र षष्ठी एक० व० में अन्त पर "क" आदेश आता है। अब "हुअ[1]" और "सुअ[1]" का अमु के साथ युगल प्रयोग देखिए :—

प्राकृत कश्मीरी युगल प्रयोग

व्युत्पत्ति :—

	एकवचन	**बहुवचन**
प्रथमा	हुअ्	हु[2] +अमणो

१. श्रीवररूचि ने अपने "प्राकृत-प्रकाश" में "अद्स" सर्वनाम के लिए प्रथमा एक "सु" में वैकल्पिक रूप से सभी लिगों में "ह" का प्रयोग किया है:— "हश्चसौ" सूत्र सं०—२४, परिच्छेद ६।

२. आर, पिशालः "प्राकृत भाषाओं का व्याकरण" पृ० ६०६-६४५।

चतुर्थी	हु+अमुस्स	हु+अमूण
पंचमी	हु+अमूओ	हु+अमूउ
षष्टी	हु+अमुस्स (क)[1]	हु+अमूहिन्नो

"सम्पन्न कश्मीरी रूप" :—

	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा वि०	हुअ (वह)	हुअ्म[2] (उन्हें)
चतुर्थी वि०	हुअ्मिस्स[3] (उसके लिए)	हुअ्मन्[4] (उनके लिए)
पंचमी वि०	हुअ्मि[5] (उससे)	हुअ्मव्[6] (उनसे)
षष्ठी वि०	हुअ्मुक[7] (म्युक) (उनको)	हुअ्मन्हुन्द (उनको)

व्युत्पत्ति :—स्त्रीलिंग प्रथमा वि० बहुवचन में "हुअ्मी" या "हुअम्य"। इसकी व्युत्पत्ति हु+अमू—हुमइ→हूअ्म्म→कश्म०—हुअम्य। न०—लिं०—चतुर्थी एकवचन में "हुअ्थ"→हु+तत् हुत्त "हुथ" शेष सब रूप एक समान हैं।

इसके अतिरिक्त कश्मीरी भाषा में कुछ ओर संकेत वाचक सर्वनामों के रूप मिलते हैं।

	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा वि०	अम्य (इसने)	नउम् (इन्होंने)
च० पं० वि०	अमि(म्य)(इसके लिए, से)	इमव→(इनके लिए, से)
षष्ठी वि०	अम्य (इसको)	इमन्हुन्द (इनको)

व्युत्पत्ति :—इन रूपों की रचना संस्कृत "अद्स" और "इदम्" प्राकृत "अमु" और "इमी" के बीच की सन्धि से हुई है।

---

१. "कलाप-व्याकरण" में विभक्ति प्रयोग के साथ "अमुक" प्रत्यय का प्रयोग होता था उसकी धुँघली छाया इस विभक्ति में संलग्न है। कश्मीर में १९वीं शती तक कलाप को एक प्रमाणिक व्याकरण के रूप में लिया जाता था और विशेषकर इसी का अध्ययन होता था।

२. आर पिशाल: णो का लोप प्राकृतों में भी प्रायोगिक वाक्य में होता है

३. वही, 'उ' ध्वनि का 'इ' परि० १२४।

४. नेमिचन्द्र शास्त्री; अभिनव प्राकृत व्याकरण; ऊ ध्वनि का "अ", पृ० ९४।

५. वही, ऊ ध्वनि का "इ", पृ० ९८।

६. उ ध्वनि का "इ" का "य", पृ० ९४ संख्या २ को देखें।

७. शेष नियम पहिले के ही आए हैं।

प्र० प्रथमा वि० "अमु"→अमी[१]→अमए→कश्म०→अम्य।
च० पं० वि० पूर्वोक्त प्रथमा वि० के समान ही इस की रचना है। च० पं० वि० बहु० व० कश्म० :—"इमव" प्राकृत द्वितीया वि० बहु० व०→इमाउ→इमउ[२]→इमव→कश्म०→इमव।
कश्म० :—"इमन्हुन्द" षष्ठी वि० बहु० व०। प्राकृत→इम्, शौरसेनी प्रत्ययान्त "हुन्त"। युगल सन्धि :—
इम+होन्त→इमहोन्त→इमहुन्द→कश्म० :→"इमन्हुन्द"।
कश्म० :—"नउम्" की व्युत्पत्ति का निरूपण वैदिक "नेम" के विश्लेषण में होगा।

कश्मीरी भाषा में इसके अतिरिक्त संकेतवाचक के कुछ रूप है :—

	एकवचन	बहुवचन
प्रथम विभक्ति	नुअम् (यह)	नओमन् (इन्हें)

संस्कृत में इसका कोई भी अवशेष रूप नहीं मिलता है और प्राकृत भाषाओं में भी अभाव ही है। संस्कृत में "अस्मद्" का निघातादेश द्वितीया और चतुर्थी वि० में अवश्य मिलता है। पर समस्त रूप में "नः" से विभक्ति भेद करना बुद्धि संगत नहीं लगता है। अतः इसकी पृष्ठभूमि वैदिक सर्वनाम "नेमं" से अधिक संगत प्रतीत होती है। कश्मीरी भाषा मूलतः वैदिक भाषा के प्रारम्भिक रूप से उद्भूत एवं इसकी उप-भाषा रही है। यह वैदिक भाषा कश्मीरी संज्ञा शब्दों एवं क्रियाओं में अभी भी अमिट संस्कारों के समान सुरक्षित है। "नेमं" सर्वनाम यद्यपि श्रीनगर से दूर होता जा रहा है, पर गाँवों में अभी भी यह जीवित है—विशेषकर कश्मीरी मुस्लमानों में क्योंकि ग्रामों में वे ही रहते हैं। इस शब्द की चिरन्तनता आज से लगभग तीन हज़ार से चार हज़ार वर्ष पुरानी है ज़ब कि कश्मीर घाटी की लोकभाषा वैदिक रही है।

वैदिक "नेम" के निम्नलिखित रूप :—

	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा वि०	नेमः	नेमे नेमाः
द्वितीय वि०	नेमम्	×
षष्टी वि०	×	नेमानाम्
सप्तमी वि०	नेमस्मिन	×

१. आर पिशाल—प्राकृत भाषाओं का व्याकरण।
२. "उ" का "व" कश्मीरी प्राकृत की निजी विशेषता।

व्युत्पत्ति :—वैदिक "नेम[1]" नेअ्म—नुम कश्म० := नुम् ।

कश्मीरी भाषा में "नेम की शेष रचना में शौरसेनी विभक्ति प्रत्ययान्त का प्रयोग होता है जैसा कि गत पृष्ठों में हम देख आए हैं ।

प्रश्नवाचक सर्वनाम :—

कश्मीरी भाषा में प्रश्न वाचक सर्वनाम का प्रयोग साधारणतः वाक्य के आरम्भ में ही होता है पर कभी-कभी विशेष प्रभावात्मक शैली में वाक्य के मध्य में भी इसका उपयोग होता है ।

प्रश्नवाचक की रूप रचना :—

	एकवचन	**बहुवचन**
प्रथमा वि०	कुस (कौन)	कम् (कौन)
चतुर्थी वि०	कमिस् (किसके लिए)	कमव (किनके लिए)
पंचमी वि०	कम्य (किससे)	कमव (किनसे)
षष्ठी वि०	कम्यसुन्द (किसका)	कमन्हुन्द (किनका)

व्युत्पत्ति :—कश्म० :—"कुस" प्रथमा वि०, एक० व० अपभ्रंश प्रथमा द्वितीया "कु" अपभ्रंश निशर्देवाचक का "स" आगम :—

कु+स→कुस[2], संस्कृतः—कः+सः→कुसः→कुस

कश्म० :—"कम्" प्रथमा वि० बहु० व० प्राकृत द्वितीया वि० एक० व० "कम्"—संस्कृत द्वितीया वि० एक० व० "कम्"—कश्म० "कम्"

---

१. यास्क तथा वैय्याकरणों के मतानुसार "नेम" शब्द अर्धवाचक है । पर सायणाचार्य ने "नेम" का अर्थ "यह" "कुछ" "अर्ध" इत्यादि किया है । वैदिक व्याकरण पृ०-३०५ "नेन्द्रो अस्तीति नेम उत्वआह क ईं ददर्श कमभिष्टवाम" "मण्डल ८-१०० ऋग्वेद" अर्थ-इन्द्र नहीं है, यह बात एक है, और दूसरा कहता है इसे किसने देखा है । हम किस की स्तुति करें ।

विशेषः- कश्मीरी भाषा में "नेम" का प्रयोग सायणभाष्य के अनुकूल है ।

कश्म० भाषात्मक प्रयोग :—

नम् ओलव — हिन्दी :—"यह आलू" ।

नुम — हिन्दी :—"कुछ" ।

नुम करय — हिन्दी :—"(तुम्हारे) टुकड़े करूँगा या (दो टुकड़े) ।

२. वैदिक साहित्य में षष्ठी वि० स्त्री लिं० :—

कासु→कसु→कसु कश्म०→कुस या कुअस ।

कश्म०:—"कमिस" चतुर्थी वि० एक० व० अर्धमागधी चतुर्थी वि बहु० व०—"केसि" कंसि→कमिसि→कअमसि→अमिसि→कमिस→कश्म० कमिस।

कश्म० :—"कमव" चतुर्थी वि० बहु० व०। अपभ्रंश पंचमी विभक्ति एकवचन।

कउ→"म" (आदेश)→कमउ→कमउ कमव कश्म० :—कमव। इसका वैकल्पिक रूप "कमन भी रहता है।

कश्म०:—"कम्य" पंचमी वि० एक० व० अर्धमागधी "कम्हा[१]" अर्धमागधी कम्हा→कम्हा→कम्ह→कश्म०:→"कम्य।"

कश्म०:—'कमव' पंचमी वि० बहु० व० चतुर्थी वि० बहु० व० के समान ही है।

कश्म० :—"कम्यसुन्द" एवं "कमसुन्द" क्रमशः षष्टी वि० एक० व० और बहु० व० है। इन दोनों रूपों में शौरसेनी पंचमी विभक्ति के विभक्ति-प्रत्ययान्त "हिन्तो, सुन्दो पूर्व वर्णित सर्वनामों के समान ही संलग्न होकर रूप रचना होती है।

सम्बन्ध वाचक सर्वनाम :—

कश्मीरी भाषा के सम्बन्धवाचक सर्वनाम एक मिश्रित अर्थात् वैदिक संस्कृत एवं प्राकृत का प्ररूप है। सामान्यतः संस्कृत में "यद" सम्बन्धकारक है पर वैदिक साहित्य में यक् यस् आदि रूप भी उपलब्ध होते हैं। कश्मीरी भाषा में इसकी रूप रचना इस प्रकार से बनती है :—

	एकवचन	**बहुवचन**
प्रथमा वि०	युस् (जिस)	इम् (जिन)
चतुर्थी वि०	यमिस (जिसके लिए)	इमव (जिनके लिए)
पंचमी वि०	यम्य (जिससे)	इमव (जिनसे)
षष्टी वि०	यम्यसुन्द (जिसको)	इमन्हुन्द (जिनका)

व्युत्पत्ति :—कश्म०:—"युस" प्रथमा वि० एक० व०। संस्कृत यः प्रथमा वि० एक० व०—

यः→यस[२]→कुस की समानता एवं सादृश्यता पर "युस" कश्म :—"युस"

---

१. प्राकृत भाषा में "य" "ह" में स्थानान्तरित होता है पर कश्मीरी में "ह" "य" में पुनः स्थानान्तरित होता है।

२. विसर्गस्यसः "सिद्धान्त कौमुदी"।

कश्म० :—"इम" प्रथमा वि० बहु० व० संस्कृत :—"यम" द्वितीय वि० एक० व०—

"अपवाद नियम"

वास्तव में प्राकृत "इमा" "इयम" प्रथमा वि० बहु० व० से ही इसकी व्युत्पति स्पष्ट है क्योंकि कश्मीरी में इस प्रकार का कोई विशेष क्रम नहीं है।

प्राकृत :—इमा→इमआ→इमअ्→इमअ् कश्म०:—"इम"।

व्युत्पत्ति :—कश्म०:—"यमिस" चतुर्थी वि० एक० व०। प्राकृत "इम" चतुर्थी वि० एक० व० इमस्स्→इमस्[१]→यमस→यमिस्[२]।

कश्म० :—"इमन" चतुर्थी वि० बहु० व०, प्राकृत "इमाण" चतुर्थी वि० बहु० व०—

प्राकृत :—इमाण→इमान→इमन कश्म० :→इमन्।

कश्म० :—"यअ्म्य" पंचमी वि० एक० व०। प्राकृत :—"इम पंचमी वि० "इमम्मि" सप्तमी वि० एक० व०।

प्राकृत :—इमम्मि→इम्म्मि→इम्मि→इम्म्य→इम्य→यम्य कश्म० :—"यम्य"।

कश्म :—"इमव" पंचमी वि० बहु० व०। प्राकृत :—इमाउ पंचमी वि० एक० व०

प्राकृत :—इमाउ→इमाव→इमव→कश्म० :—"इमव"।

कश्म० :—इम्यसुन्द षष्ठी वि० एक० व०, प्राकृत :—"इमम्मि" पंचमी वि० एक० व०

प्राकृत :—इमम्मि→इमम्मि→इम्मि→इम्म्य→इम्य:—यम्य। शौरसेनी पंचमी वि० प्रत्ययान्त "सुन्त"→यम्य+सुन्द→यम्य-सुन्द→यम्यसुन्द।

---

१. यह पर्वतीय प्रदेश की विशेषता है। इस समय भी यहाँ के वैदिक लोग "इमानि" का उच्चारण "यमानि" करते हैं। दूसरी विशेष उल्लेखनीय बात यह है कि कश्मीरी की जनता अतीत युग में अन्य भारतीय भाषा भाषियों से अलग-अलग रही है और यातायात के साधन दुर्गम पर्वतीय भूभाग के लिए दुस्तर रहे हैं। यह भी विशेष कारण हो सकता है "य" कश्मीरी में अर्द्ध स्वर की अवस्था में लिया हो।

२. कश्मीरी प्राकृत में "इ" और "य" आपस में स्थानान्तरित होते हैं।

कश्म० :—यम्यसुन्द । कभी-कभी इसका प्रयोग "इम्यसुन्द"
कश्म० : "इम्य" षष्ठ वि० बहु० व० :—
इम्‌य→हुन्त[१]→इम्यहुन्त—इम्यन्हुन्द ।

विशेष :—स्त्री लिं० एक० व० में इसका रूप संस्कृत "यद" एवं प्राकृत "इअ" प्रथमा वि० एक० व० ।
एस→यस्→यअ्स→कश्म० :—"यअ्स" षष्ठी वि० एक० व० में ध्वनि विपर्यय ।
पुं० लिं० :—इम्यसुन्द । स्त्री० लिं० :—इम्यसुज्ज[१] ।

स्वामित्व बोधक सर्वनाम :—

संस्कृत भाषा में इसका प्रयोग तद, एतर, अस्मद्, युष्मद्, शब्दों में प्रत्यय लगाकर किया जाता है । कश्मीरी में स्वामित्व बोधक के रूप इस प्रकार से बनते हैं :—

उत्तम पुरुष एक० व० :—म्योन (मेरा)
मध्यम पुरुष एक० व० :—च्योन (तेरा)
अन्य पुरुष एक० व० :—तअ्म्यसुद (उसका)
उत्तम पुरुष बहु० व० :—स्ओन् (हमारा)
मध्यम पुरुष बहु० व० :—तअ्हुन्द (तुम्हारा)
अन्य पुरुष बहु० व० :—तिहुन्द (उनका)

इसके अतिरिक्त सब रूपों के स्वतन्त्र बहु० व० भी हैं । यद्यपि यह बहु० व० प्रयत्न-लाघव की दृष्टि से सम्पन्न हुए हैं फिर भी इनका भाषात्मक प्रयोग होता है ।

कश्म० :—म्योन् उत्तम पुरुष प्रथमा वि० एक० व० स्वामित्त्व बो० स० ।

वास्तव में इसका यह रूप महाराष्ट्री[२] "म्या" और संस्कृत स्वामित्व बोधक सर्वनाम "यामकीन" के अन्तिम "न" ध्वनि के संयोग से बना है । यथा :—

म्या+न→म्यान→म्योन

---

१. "न्द" का ज्ज् प्राकृत में भी यह रूप मिलता है ।
स्वयभू—"पउम-चरिउ" ।

२. महाराष्ट्र शब्द कोष,'''पृष्ठ २५५२, भाग (म—वृ) ।

व्युत्पत्ति :—म्या[२] + न—म्यान—म्योन।

कश्म० :—म्येन :—प्रथमा वि० बहु० व० स्व० बो सर्वनाम।

म्यान → म्यान → म्येन → म्येन्य

"म्य" की सादृश्यता पर 'न' का 'न्य'—म्येन्य।

कश्म० :—म्येनिस :—उत्तम पु० चतुर्थी वि० एक स्वा० बो० सर्वनाम।

प्रथमा वि० बहु० व० "म्येन" प्राकृत चतुर्थी वि० एकवचन प्रत्ययान्त।

"अस्स" "इस्स" के संयोग से :—

म्येन + इस्स → म्येनिस → कश्म० :—मेनिस्स

कश्म० :—"म्यान्यन" चतुर्थी वि० बहु० व०

कश्म० :—प्रथमा वि० बहु व० :—म्येन्य—प्राकृत द्वितीया वि० बहु० व० प्रत्यायन्त "ण" "इण"

म्यान → प्राकृत वि० प्रत्ययान्त ण—म्यानअण—म्यान्यण प्रथमा वि० बहु० व० की सादृश्यता पर म्यान्य + ण।

म्यान्यअ्ण[२]—म्यान्यण कश्म० :—म्यान्यण।

कश्म० :—म्यानि पंचमी वि० एक व० प्रथमा वि० एक व०

म्या + न → म्यान म्यान + प्राकृत प्रत्ययान्त ईअ, ईमा, अइ।

म्यान + अइ म्यानअ्इ → म्यानइ।

म्यानि कश्म० :—"म्यानि।"

कश्म० :—"म्यान्यव" चतुर्थी वि० बहु० व० में प्राकृत का "ण" "इण" प्रत्ययान्त संलग्नता से "म्यान्यन्" इसी के सादृश्य पर प्राकृत पंचमी वि० बहु० व० प्रत्ययान्त "आओ" "अउ" के प्रयोग से इसका रूप बना है।

---

१. वररूचि :—प्राकृत-प्रकाश के अनुसार कश्मीरी म्योन की उत्पत्ति "मन्तने, मइत्तो, मयाओ, मयाउ, मयाहिं, यसौ"। संजीवनी टीका में श्री सहानन्द का कथन है ममाओ × अण्णो महन्यः। यदि हम यह स्वीकार करें कि मध्य दीर्घ स्वर उक्त व्यंजन का कश्म० में लोप हुआ है तो इस प्रकार का रूप बनता है मओ + अण्णे, मओ + ण्ण—म्योणः यह भी संगत व्युत्पत्ति कश्म० "म्योन" (मेरा) की है।—लेखक

२. कश्मीरी प्राकृत में "उ" मात्रा का विवर्यण "व" होता है यथा :—
संस्कृत उद्धार कश्म०-वद्धार

म्यान्य + अउ → म्यान्यअउ्
म्यान्यउ → [1]म्यान्यव

इसी के अनुरूप "च्योन[2]" (त्वं) (तुम्हारा) की स्वामित्व बोधक सर्वनामों की रूपरचना होती है।

व्युत्पत्तिः—कश्म० :—च्योन प्रथमा वि० एक व० मध्यम पुरुष।

संस्कृत :—त्वं (युष्मद्) प्रथमा वि० एक व०।

प्राकृत—तु → तो → चो, "तावकीन" का "न" च्योन कश्म०-चोन (तुम्हारा) शेष रूपों में म्योन के सादृश्य पर ही चतुर्थी पंचमी विभक्तियों में प्राकृत प्रत्ययान्तों का प्रयोग होता है।

कश्म :—तम्यसुन्द उसका प्रथमा वि० एक व० स्वामित्व बोधक सर्वनाम अन्य पुरुष। इस शब्द की मूल व्युत्पत्ति संस्कृत सर्वनाम तद् और इदम् और प्राकृत ते + इमे से निष्पन्न हुई है।

ते + इमे → तेइमे → तिइमे।

तिअ्मे → तिअम सम्बन्ध कारक में इसका "तअम्य" और शौरसेनी प्राकृत पंचमी वि० प्रत्यान्त का सुन्थ एवं "सुन्द" से इसके रूप की पुष्टि होती है।

तअ्म्य + सुन्द—तअ्म्यसुन्द एक व०।

कश्म० :—तिमन्हुन्द षष्ठी वि० बहु व० प्राकृत → इमन्, त + इमान तइमान → तिमअ्न → तिमन शौरसेनी प्राकृत पंचमी विभक्ति प्रत्ययान्त "हुन्द"।

तिमनहुन्द कश्म तिमन्हुन्द (उनका)

कश्मीरी रूप रचना :—

	एक व०	**बहु व०**
प्रथम वि०	तअम्यसुन्द[2]	तिमन्हुन्द

शेष चतुर्थी पंचमी विभक्तियों के प्रत्ययान्त पूर्ववत् ही प्रयोग होते

---

१. कश्मीरी प्राकृत में अन्य प्राकृतों के समान ही "त" "च" में स्थानान्तरित होता है वररूचि :—प्राकृत प्रकाश, पृष्ठ २०६ तथा शति कण्ठ :—महानय प्रकाश, पृष्ठ १११ अ० दसवी शती का कश्मीरी प्राकृत "दार्शनिक ग्रन्थ"।

२. कश्मीरी प्राकृत में इसका उच्चारण बहुधा प्राकृत "तत्" या "त" के पंचमी वि० एक व० "तम्हा" के समान होता है। उस दृष्टि में प्राकृत "तम्हा" "तम्हासुन्द" कश्म०—"तम्ह्यसुन्द" पं० वि० एक व० पर कश्मीरी रूप रचना प्रथमा, चतुर्थी, पंचमी में हुई है।

हैं केवल स्त्रीलिंग में शौरसेनी प्राकृत का प्रत्ययान्त "सुन्द" तथा "हुन्द" की "द" ध्वनि "ज"[1] में स्थानान्तरित होती हैं।

कश्म० "सओन्" प्रथमा वि० एक व० उत्तम पुरुष।

यह शब्द मूलतः संस्कृत न होकर वैदिक शब्द है। ऋग्वेद में इसके दो रूप मिलते हैं एक अव्यय के रूप में जिसका प्रयोग संस्कृत भाषा में "स्वयम" शब्द से होता है और दूसरा सर्वनाम के रूप में, पर दोनों ही शब्दों में कर्तृ वाचकत्व रूप ही सन्निहित है।

(सर्वनाम) प्रथम रूप—स्वं वित्स मन्यते ऋ० मण्डल ८, ४, १२।

(अव्यय) द्वितीय रूप—स्वयं यजस्व दिवि देव देवान् ऋ० १०, ७, ६।

कश्मीरी में इसकी रूप-रचना वैदिक व्याकरण के तृतीया विभक्ति एक वचन "स्वेन" पर हुई है। यद्यपि कश्मीरी में अब भी "व" की न्यूनांश अस्पष्ट ध्वनि सन्निहित है पर युगों के उच्चारण प्रहारों से इसका आदिम स्वरूप "स्ओन" में ही अवशेष है। पंजाबी में इसी का विकृत रूप "सानू" (सानू क्या है=हमें क्या है)। यदि हम ठेठ भाषा-शास्त्रीय दृष्टि से कश्मीर के इन स्वामित्व-बोधक सर्वनाम की समीक्षा करें तो युगों की कड़ी स्पष्ट होती है—अर्थात् "म्य" 'तिम' या 'तिम्ह' आदि संलग्न "न" की ध्वनि अर्थात् म्यो न, चो न, तिम न हुन्द से संलग्न 'न' सादृश्यता की अनुरूपता से इसी वैदिक "स्वे न" के सर्वनाम ने शेष सर्वनामों को अपने साँचे में ढाला है। यह स्पष्ट है कि जब तक पूर्ण-रूपेण भाषा का अन्तिम व्यवस्थित विश्लेषण नहीं होता है, तब तक अन्तिम निर्णय होना युक्तिसंगत नहीं है।

व्युत्पत्ति :—वैदिक स्वेन—स्वएन—स्वओन

स्ओन कश्म०—स्ओन।

शेष विभक्ति-चिन्ह चतुर्थी-पंचमी में पूर्व वर्णित प्राकृत-प्रत्ययान्त के संयोग से बनते हैं। स्त्रीलिंग में भी म्योन (हमारा) के समान ही किंचित अन्तर आता है।

कश्म०—त्व अ्हन्द "आपका प्रथम वि० एक वि० उत्तम पुरुष, सामान्यतः आदरवाचक है। मेरे शोध के अनुसार यह कश्मीरी भाषा का शुद्ध मध्यम पुरुष प्रयोग है। अपभ्रंश में युष्मद की

---

१. यह नियम प्राकृतों में—विद्या—विज्जा कश्म०—माता—मअ्ज़ आरपिशाल—भा० मा० का व्या०।

प्रथम वि० एक व० "तुहु"[1] से भी इसकी रूप रचना सम्भव प्रतीत होती है।

व्युत्पत्ति :—संस्कृत युष्मद् प्रथमा वि० एक व० मध्यम पु० त्वम्—त्व + हुन्द शौरसेनी पंचमी वि० प्रत्ययान्त त्वहुन्द कश्म०—"त्वहून्द"। शेष इसमें भी चतुर्थी एवं पंचमी पूर्वोक्त रीति से ही प्राकृत प्रत्ययान्तों के संयोग से रूप-रचना होती है। बहु व० स्त्रीलिंग में शौरसेनी पंचमी वि० प्रत्ययान्त के "द" ध्वनि में 'ज' का विपर्यय आता है।

कश्म०—तिहुन्द (उनका) प्रथमा वि० एक० व० अन्य पुरुष।

व्युत्पत्ति :—संस्कृत "तद्" शब्द प्रथमा वि० बहु० व० प्राकृत "ते" प्रथमा वि० बहु० व० :—ते + हुन्द शौरसेनी पंचमी वि० प्रत्ययान्त हुन्द सुन्द → तेहुन्द → ति्हुन्द।

शेष "त्वहुन्द" (आपका) के समान ही रूप-रचना है और लिंगान्तर भेद भी तदनुरूप ही है।

स्व-वाचक सर्वनाम :—

संस्कृत में स्व० वाचक सर्वनाम का भाव आत्मन् (आत्मा) शब्द से प्रकट किया जाता है, अर्धमागधी में "आत्मन्" शब्द स्व० वाचक सर्वनाम के रूप में ही लिया जाता है। कश्मीरी प्राकृत में संस्कृत "आत्मन्" का रूप "पाणअ्" में स्थानान्तरित हुआ है।

व्युत्पत्ति :—क—अर्ध मागधी प्रथमा वि० एक व० "अप्पा"।

ख—कश्मीरी प्रथम० वि० एक व० "प्पण्न"।

ग—अपभ्रंश देशी प्रथम० वि० एक० व० "आपुन[2] अप्पुन को।

कश्मीरी में अप्पुन या अप्पा का अग्रिम "अ" लुप्त होता है और "अप्प" शेष रहता है। यहाँ मैं पुनः इस बात का संकेत देना आवश्यक समझता हूँ, कि कश्मीरी स्वामित्व बोधक सर्वनाम और स्व वाचक सर्वनामों में प्रत्ययान्तों की रचना के दृष्टिकोण से विशेष कोई अन्तर नहीं है। यदि कहें कि कश्मीरी भाषा में वैदिक "स्वेन" तृतीया वि० एक व० के अन्तिम

---

१. डॉ० हरदेव बाहरी : प्राकृत और उसका साहित्य।
२. आर पिशाल—प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पृष्ठ ७३४।

"न" ध्वनि ने, यहाँ के समस्त स्वामित्व-बोधक सर्वनामों एवं स्व-वाचक सर्व-नामों की रचना में "न" की अमिट छाप है तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी।

कश्म० :—"प्पनुन्" (अपना) प्रथमा वि० एक० व० उत्तम पुरुष आदर वाचक अर्धमागधी तृतीया एक० व० अप्पाणा :—

व्युत्पत्ति :—अर्धमागधी अप्पाणा→अप्पणा→अप्पणु→अप्पणु अप्पणू→ "स्ओन"→(हमारा) के सादृश्य से "न"→प्पणुन→कश्म० :— "पनुन"।

शेष चतुर्थी एवं पंचमी के विभक्ति प्रत्यायान्त पूर्ववत् ही प्रयुक्त होते हैं।

स्त्री लिं० में प्रथमा, चतुर्थी एवं पंचमी एक० व० में "प्पननि" अर्धमागधी—अप्पाणा→अप्पणा→प्पणा→साद्दश→प्पणान→ प्पणइन प्पणनि कश्म०:—प्पणानि→प्पननि षष्ठी विभक्ति एक० व० "प्पनिस्स" का रूप प्राकृत प्रयोग के समान ही रहता है।

परस्पर सम्बन्ध बोधक सर्वनाम :—

संस्कृत में अन्य "इत्तर" और "पर" शब्दों की द्विरुक्ति के द्वारा पारस्परिक सम्बन्ध का बोध कराया जाता है। कश्मीरी भाषा में भी पर-स्पर सम्बन्ध बोधक सर्वनाम का यही तात्पर्य है। इस सर्वनाम की अभि-व्यक्ति के लिए कश्मीरी में अक्क-अक्किस् और "प्पाण् अ्वअ्न्य" (एक दूसरे में) (आपस में) का प्रयोग किया जाता है :—

व्युत्पत्ति :—कश्म०—अक्क-अक्किस संस्कृत में संख्या वाचक एक प्राकृत एक्क कश्म० :—अक्क या अक्ख।

परस्पर बोधक सर्व० – अक्क+अक्कि। अक्क+शौरसेनी षष्ठी वि० प्रत्ययान्त "स्य" अक्कस्स अन्य कश्मीरी रूपों के साद्दश्य पर "इ" प्रत्यय का आगम—"अक्किस्स।"

कश्म० :—"पाणवअ्न्य" कश्मीरी भाषा में स्व वाचक सर्वनाम →प्यानअ् का अग्रिम→पा+अन्योन्य→पान्योन्य[१]→पान्यवन्य (कष्टवारी प्रयोग)।

कश्म० :—"पानवअन्य" (आपस में)।

---

१. कश्मीरी में उ, ओ, का बहुत कम अन्तर, भाषात्मिक प्रयोग में, रहता है।

अनिश्चय वाचक सर्वनाम :—

संस्कृत में अनिश्चय वाचक सर्वनाम में "किम्" शब्द के किसी वचन के रूप के साथ चित् चन् अपि, स्वित, लगाकर बनाए जाते हैं कश्मीरी भाषा में भी अनिश्चय वाचक सर्वनाम संस्कृत "किम्" ही है।

व्युत्पत्ति :—कश्म० :—कांह् प्रथम वि एक व० अनिश्चय वाचक सर्वनाम।

कश्म०:—काह्[1] (कोई) वै० :—कश्च या काश्च→काह→कांह

कश्म०—कांह्

कश्म० :—कॆंह् प्रथमा वि० बहु व० वैदिक→केश्च→केह्ज्[2]

कॆंह कश्म० :—कॆंह :—

कश्म० :—कअस्सि कंहस्सि[3] चतुर्थी एवं पंचमी वि० एक० व० (किसी को)।

वै० :—कश्च→कह्च्→कंह→कांह प्राकृत प्रत्यय चतुर्थी वि० एक० व० स्सु कंअस्सु—कंअ्स्सि।

कश्म० :—कुस्तान्य (कोई) चतुर्थी एवं पंचमी वि० बहु० व० वै० :→ काश्च→कास्त→कास्त→कास्त[4]। कुस्त, सर्वनाम-सम्बन्धी विशेषण→"अन्य"।

युगल प्रयोग :—कुस्त अन्य→कुस्तान्य→कश्म० :—कुस्तान्य।

कश्म० :—"कंहस्युन्द कअ्हसीन्ध (किसी का) क्रमश षष्ठी वि० एक व० एवं बहु० व० इनकी व्युत्पत्ति पूर्ववत् ही है। इन में शौरसेनी पंचमी वि० प्रत्यायन्त "हिन्तो" "हुन्तो" लगाने से रूप-रचना हुई है। स्त्री लिं० में शौरसेनी प्रत्ययान्त हिन्तो—हुन्तो—"त" ध्वनि "ज" में स्थानान्तरित होती है इसके अतिरिक्त अनिश्चय वाचक सर्वनाम में दो और रूप भाषा में बनते हैं :—

---

१. कश्मीरी में अर्ध अनुस्वार का प्रयोग इसके साथ होता है।

२. कश्मीरी प्राकृत में 'श' 'ष' 'ह' में विपर्यय होते हैं। अन्य भारतीय प्राकृतों में भी यही है।

३. कश्मीरी प्राकृत में "ह" कभी "अ" ध्वनि में उच्चारित होता है कभी "ह" अतः यह कश्मीरी में अन्तर-परिवर्तनीय है।

४. कश्मीरी में तवर्ग, कवर्ग अन्तर-परिवर्तन आते हैं।

५. प्राकृत भाषा में भी "द" "ज" ध्वनि में विपर्यय होती है यथा :—विद→विज् विद्युत→विज्जत।

कश्म० :—"कहींन" संस्कृत :—"किंहिनु" का ही और रूप कुन्य कांह—किंनुहि।

कश्म० :—कांहीनअ् (कोई नहीं) संस्कृत :—"किंहिनु" या न।

कश्म० :—कुन्यकांह (कोई)…"किंहिन।"

परिणाम और सादृश्य वाचक सर्वनाम :—

संस्कृत में परिणाम और सादृश्य-वाचक सर्वनाम यद् तद् और एतद् शब्दों से वत् प्रत्यय लगातार तथा इदम् और किम् शब्दों से यत् दृश लगाकर बनाए जाते हैं :—

परिणाम वाचक :—

सं० :—"कियत" (कितना) प्राकृत :—केत्तिय कश्म० :—कउत्या

सं० :—"तावत" (उतना) प्राकृत :—तेत्तिय कश्म० :—तीत्या

सं० :—"इयत" (इतना) प्राकृत :—इत्तिम कश्म० :—यूत

सं० :—"एतादृश" (ऐसा) प्राकृत :—एरिसो कश्म० :—युथ

सं० :—कीदृशः (कैसा) प्राकृत :—कीदिसो कश्म० :—किथ्

सं० :—यादृशः (जैसा) प्राकृत :—येरिसो कश्म० :—युथ

सं० :—तादृश्य (वैसा) प्राकृत :—तइसो कश्म० :—तिउ्थ

परिणाम वाचक :—

सं० :—कति (कितने) प्राकृत :—केत्तिय कश्म० :—कअत्या

सं० :—तति (उतने) प्राकृत :—तेत्तिय कश्म० :—तीत्या

सं० :—यति (जितने) प्राकृत :—जेत्तिय कश्म० :—इत्या

सर्वनाम सम्बन्धी क्रिया-विशेषण :—

सं० :—"तद" :—

व्युत्पत्ति :—सं० :—तर्हि (तब)→तरहि→तलहि→त्यलइ→कश्म० :——त्यलि।

सं० :—"तथा" (वैसे)→तअ्था→तिअ्थ→कश्म० :—तिअ्थ।

सं० :—ततः :—

सं० :—तत्पश्चात् (उसके बाद)—तत्पत—"श्चा" का लोप…………

कश्म० :—"तत्पअ्त"।

कश्मीरी में इसके सादृश रूप :—

क "च्एअ्पत (आपके पीछे) मध्यम पुरुष

ख "मेअ्पत (मेरे पीछे) उत्तम पुरुष।

ग "तमिस्पत (उसके पीछे) अन्य पुरुष आदर प्रयोग।

घ "तस्सपत् (उसके पीछे) अन्य पुरुष।

सं० :—"इदम" :—

सं० :—"इत्थम्" (इस प्रकार)→यत्थ[१]→युत्थ→कश्म० :→"युत्थ"

सं० :—"अत्र" (यहाँ)→इत्र→यतर→यत→यति[२]—

सं० :—"इत:" (यहाँ से)→इत→इति सहायक शब्द संयोग→प्यठम्[३]

—इति प्यठम्—इतिप्यठम।

सं० :—अधुना; अब—"अध" का लोप शेष "उना"→वन्ना[४]→

वअ्ना→वअन्य।

सं० :—इह (यहाँ) सं० :—ईत: के सादृश्य पर "इति"।

संस्कृत "एतद" :—

सं०—"इत्थम्" (इस लिए) इत्थ→इउत्थ कश्म०→इउथ।

सं०—"अत्र" यहाँ→अतर्→अत→अति कश्म०→"अति"।

संस्कृत "यत्" :—

सं०—र्यहि (जब)—यरहि→यलहि→यलिइ कश्म०→यलि (यल्य)।

सं०—यथा (जैसा)→यथ→युथ कश्म० युथ्।

संस्कृत "किम्" :—

सं०—र्कहि (कब)→करहि→करह→करम कश्म०→करअ्।

सं०—कुत्र (कहाँ)→कुतर→कव्त—यत्र के देशी सादृस्य पर कम्ति कश्म०→कति।

१: "यथा" के सादृश्य पर "इ" का "य।"

२. "इति" के सादृश्य पर।

३. "पृष्ठाधारे" अधिकरण प्रयोग प्राकृत "अमोप्यठ्ठ" (उन पर)।

४. कश्मीरी प्राकृत में 'उ' प्राय: 'व' में स्थानान्तरित होता है यथा उश्वास—कश्म०:—"वअश्य"। इसके अन्य उदाहरण गत पृष्ठों में यथा-स्थान-पर आए हैं।

जुड़वाँ

हरिकृष्ण कौल
हिन्दी प्राध्यापक, अमरसिंह कालिज श्रीनगर ।

**

मुझे देखते ही..........साहब के चेहरे का रंग जैसे उड़ गया । वह तनिक पीछे हट गया । मेरी आशंका सही साबित हुई थी । मैंने और अधिक समय नष्ट करना उचित न समझा तथा बड़े ही आदर और आज्ञाकारी भाव से निवेदन किया.......जनाब, मैं वह नहीं हूँ, मैं उसका जुड़वाँ भाई हूँ । जुड़वाँ होने के कारण ही हमारी शक्ल व सूरत आपस में मिलती है ।

उसने मुझ पर नख से शिख तक दृष्टि डाली । मेरा सजा-सँवरा शरीर मेरे साफ व सुन्दर कपड़े और मेरा हाथ जोड़ कर मुस्कराने का अन्दाज़ देख कर शायद उसे भी विश्वास हुआ कि मैं वह दलिद्दर नहीं हो सकता हूँ । कुछ समय के लिए हम दोनों चुप रहे और तब उसने पूछा.......इधर कुछ दिनों से वह दीखा नहीं । कहाँ है आजकल ?

'जनाब, वह परसों मर गया ।'

सुनकर......साहब की छाती पर बैठा बोझ जैसे हट गया । वह ज़ोर से हँस पड़ा । मैं भी मुस्कराया । फिर वह सहसा गम्भीर हो गया । मैं भी अपने चेहरे पर गम्भीरता ले आया ।

"वैसे तो वह बड़ा ढीठ था, मगर मानना पड़ेगा कि उसकी कलम में ज़ोर था ।

'होगा, मगर जनाब उसका लाभ' मैंने कहा......"हमारे घर में रोटियों के लाले पड़ गये । हजूर यह आपकी महानता और शालीनता है कि आप उसके विरुद्ध कुछ नहीं कहना चाहते हैं । लेकिन में खुद कहूँगा कि वह एक आवारा आदमी था । उसने अपनी ज़िन्दगी खराब की । अपना घर बर्बाद

किया। आप ने फरमाया कि उसकी कलम में ज़ोर था। यह एक गलत-फहमी थी जिसका वह खुद भी शिकार था। यदि यह बात सही होती तो उसे सरकारी अकादमियों के पुरस्कार नहीं मिले होते। जनाब आजकल थोड़े ही शख्सी राज है आज तो प्रजातंत्र है, आजकल प्रतिभा और योग्यता देख कर ही ये पुरस्कार और उपाधियाँ बाँटी जाती हैं।"

"........" हँस पड़ा। मैं भी मुस्कराया।

"घरवालों को उसकी मौत पर बड़ा दुःख हुआ होगा"

"जनाब नहीं। बाप तो पहले ही उससे बेज़ार था। हाँ, माँ के मन में उसकी ममता ज़रूर थी। वह उसके लिये कुछ भी करने को तैयार थी। वह जाने कहाँ-कहाँ आवारा घूम फिर कर रात के एक दो बजे घर लौटता और वह बेचारी "टूर" में भात परोसे उसके इन्तिज़ार में उस समय तक जागी रहती। लेकिन बाद मैं उसे भी तसल्ली हो गयी।"

"तुम ने उसे कभी नहीं समझाया"

"जनाब बहुतेरा समझाया पर व्यर्थ। ललद्यद ने जो कहा है, मूढ़ को ज्ञान की बात नहीं बतानी चाहिए..............."

"........" साहब सहसा उठ खड़ा हुआ। मैं भी उठा। वह दाहिनी ओर के दरवाज़े से भीतर चला गया। मैं फिर सोफ़े पर बैठ गया।........ सचमुच मैंने उसे बहुत समझाया था। मैं प्रायः उसके सामने लम्बे भाषण देता था। अपनी सारी बुद्धिमत्ता झाड़ता था। वह मेरी बातें चुप-चाप सुन लेने के बाद बस धीरे से मुस्करा देता। उसकी मुस्कराहट देखकर मुझे मैं स्वयं क्षुद्र, और अपनी बातें खोखली मालूम पड़तीं। आख़िर मैंने उसे खत्म करने का निर्णय ले ही लिया। मुझे विश्वास हो गया कि ऐसा करना बहुत ज़रूरी है, अन्यथा मुझे कभी उभरने का अवसर ही नहीं मिलेगा। मैंने अनेक बार उसका गला घोंटने की बात सोची। किन्तु ज्यों ही उसके साथ आँखें चार होतीं, मेरे हाथों की शक्ति जवाब दे जाती तथा सारे शरीर से पसीना छूटता। हाँ, परसों एक ऐसी बात हुई जिस की मुझे आशा नहीं थी। आधी रात को जब वह घर लौटा तो उसकी आँखों में आँसू थे। मुझे देखते ही वह मुझ से लिपट गया और आँखों में बन्द आँसू सहसा बह निकले। मैंने उसके आँसू पोंछ कर उससे इस दुःख का कारण पूछा। उसनें कहा ...."मेरे भाई रोज तुम मेरे इन फटे पुराने कपड़ों पर हँसते थे। मेरी फाका-मस्ती का मज़ाक उड़ाते थे मगर मैं बुरा नहीं मानता था। उलटे

मुझे तुम पर दया आती थी। मैंने तुम से कभी नहीं कहा, मगर मेरे पास बहुत कुछ था। मैं लाचार मोहताज नहीं था। मैंने एक बहुत बड़े आदमी के पास लाख रुपये अमानत के तौर पर रखे थे। लेकिन आज मैंने उसी आदमी के द्वार पर दिन में दीया जलते देखा। उसका दीवाला निकल गया है। वह आज कंगाल बन गया है। मैं उसके मकान के सामने गली में फफक फकक कर रोने लगा। अड़ोस-पडोस के बहुत से लोग बाहर आये। मेरी दास्तान सुन कर वे मुझ पर ही हँसने लगे। कहने लगे कि वह आदमी हमेशा ही कंगाल था। मैंने ही उसे करोड़पति समझने की भूल की थी........"

मैंनें उसके मुख को सूंघा। शायद आज उसने एक-आध बोतल ज़्यादा ही चढ़ा ली थी। तभी कंगाल होकर भी लाखों और करोड़ों की बात कर रहा था। फिर वह ज़्यादा ही बहक गया और परस्पर असम्बद्ध बातें करने लगा और कभी कम्यूनिज़्म की बात करने लगा और कभी चैकोस्लोवाकिया के म्यूज़िक हालों के किस्से सुनाने लगा। कभी सोशलिज़्म झाड़ने और इनकम-टेक्स एक्ट के नियम-उपनियम बकने लगा। इसके बाद बापू के अहिंसावाद पर भाषण देने लगा और फिर उसे बीच में ही छोड़ कर अहमदाबाद की कपड़ा मिलों का वर्णन करने लगा। आखिर वह शिथिल होकर फ़र्श पर गिर पड़ा। मैंने वही समय उपयुक्त समझा। अपने हृदय को दृढ़ किया। खुदा से हिम्मत माँगी और रात के अन्धेरे में गला घोंट दिया। उसकी आखें फूट कर बाहर निकल आयीं और वह शीघ्र ही ठण्डा हो गया। सुबह सब ने उसकी लाश कमरे में चित पड़ी देखी। उसकी बाहर फूट पड़ी आखें बड़ी भयानक लग रही थीं। उसका मुख चादर से ढाँपने से पूर्व जब हम उसकी आखें बन्द करने लगे तो उन से आँसू की दो मोटी मोटी बूदें टपक पड़ीं।

"........साहब ने पुनः ड्राइंग रूम में प्रवेश किया। मैं उठ खड़ा हुआ और उनके बैठने पर मैं भी बैठ गया।"

"क्या सोच रहे थे" उसने पूछा।

"जनाब कुछ नहीं, बस आप की रुचि की दाद दे रहा था। इन दीवारों का यह रंग सोफों का यह डिज़ाइन, इन चित्रों और कलाकृतियों का चयन..............जनाब आप स्वयं भी बहुत बड़े कलाकार हैं।"

वह हँस पड़ा। मैं भी मुस्कराया।

"तुमने भी अपना ड्राइंग रूम कुछ उसी तरह सजाया होगा। क्यों"

"जनाब, कैसा ड्राइंग रूम उस बदबख़्त की कृपा से हम मिट्टी के एक कच्चे बोसिदा मकान में रह रहे हैं ।"

"तो आप प्लाट के लिए दरख़्वास्त दीजिए । फिर देखिये ख़ुदा क्या करता है ।"

मन ने गवाही दी कि ख़ुदा जो करेगा अच्छा ही करेगा । कुछ सोच कर मैंने निवदेन किया कि मैंने भी एक पुस्तक लिखनी आरम्भ की है और उसकी भूमिका जनाब से लिखवाने का इच्छुक हूँ ।

"........" साहब हँस पड़ा । मैं भी मुस्कराया ।

मैं प्रसन्नचित्त वहाँ से बाहर आया । मन गवाही दे रहा है कि ख़ुदा अच्छा ही करेगा । बस केवल एक ही चिन्ता मुझे खाये जा रही है । जाने उस 'दलिद्दर' की रूह मुझे रहने बसने या लिखने देगी ? सुना है जिस किसी को इस प्रकार मारा जाता है, उसकी रूह बेगुनाह लोगों को भी कयामत तक परेशान करती रहती है ।

(लेखक द्वारा मूल कश्मीरी से अनुवादित)

⌣+⌣+⌣

मुझसे यह मत कहो कि यह समस्या कठिन है; यदि कठिन न होती, तो समस्या ही न होती ।

—मार्शल फोक

● ● ●

बेशर्म औरत, कायर आदमी, बदतमीज़ नौकर, ढीठ सन्तान, अड़ियल घोड़ा, सड़ा पान, मूर्ख शिष्य, टपकती छत, अयोग्य गुरु, तंग जूता, रिश्वती अफसर, पाखण्डी पुरोहित, और अन्यायी सरकार इनसे पाला पूर्व जन्म के पापों के कारण ही पड़ता है ।

सम्पादकीय

++

विद्यार्थी-स्तर की अनुशासनहीनता

पिछले दशक में ग्रेट ब्रिटेन, फ्रांस, अमरीका, मध्यपूर्व से लेकर पाकिस्तान तथा मलेशिया, जापान और इण्डोनेशिया में जो छात्रों के उपद्रव हुए हैं उनका प्रभाव (नक्सलवादी तत्वों की सहायता से पनपकर) भारत में भी पड़ा है। छात्र-शक्ति (Student power) तथा पीढ़ी-व्यवधान (Generation Gap) ने इससे मिलकर परिस्थिति को और भी विचित्र बना दिया है। यह सत्य है कि बंगाल तथा तामिलनाडु को छोड़कर इसका उग्र रूप अभी पूर्णरूपेण भारत में नहीं पनपा है, तथा यह भी सत्य है कि भारत का सामान्य विद्यार्थी अभी उतना उग्र तथा अतिवादी नहीं बना है, फिर भी संकेत इस बात की ओर हो रहे हैं कि यदि इस समस्या को शीघ्र नहीं समझा (सुलझाया) गया तो हालत इतनी बिगड़ जायगी कि फिर बात हाथ से निकल जायगी। देखना यह है कि छात्रों (तथा युवा वर्ग) की इस व्यग्रता-उग्रता का कारण क्या है ? कुण्ठामूलक, हिंसात्मक परम्परा-विरोध का भाव क्यों छात्र-वर्ग में जड़ पकड़ता जा रहा है ? प्रशासन, विद्यालयों (तथा विश्वविद्यालयों) के अधिकारियों, शिक्षकों, अभिभावकों तथा छात्रों को बैठकर एक 'सेमिनार' करना चाहिए, जिसमें इस समस्या पर पूर्णरूपेण विचार किया जाय। लगता यह है कि दोष सबका है—और सुधार भी सबका ही होना चाहिए। जितना शीघ्र यह 'सेमिनार' किया जायगा उतना ही अच्छा होगा। विश्वविद्यालय स्तर पर, फिर प्रदेश स्तर पर, तदुपरान्त अखिल भारतीय स्तर पर, इस प्रकार के 'सेमिनार' होने चाहिए।

अहिन्दी प्रदेशों में हिन्दी वालों का कर्तव्य

हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए यह आवश्यक है कि वे हिन्दी-भाषी लोग जो अहिन्दी-भाषी प्रदेशों में शिक्षण का कार्य करते हैं—इस बात का ध्यान रखें कि उनके कार्य-क्षेत्र की जो भाषा है, उसका हिन्दी के साथ सम्पर्क अधिकाधिक बढ़ता रहे। उस प्रदेश की भाषा तथा संस्कृति के साथ उन शिक्षकों का निकट का सम्बन्ध बढ़ना चाहिए तथा उस प्रदेश की भाषा एवं संस्कृति के विषय में विभागीय स्तर पर शोध-कार्य भी होना चाहिए। यही नहीं, हिन्दी में उस प्रादेशिक भाषा के साहित्य के अनुवाद

भी प्रकाशित किए जायँ । 'वितस्ता' के द्वारा हम अपने विभाग में किए जाने वाले इस प्रकार के कार्य को प्रकाशित करते हैं । हर्ष का विषय है कि इस सम्बन्ध में जो प्रतिक्रिया अन्य क्षेत्रों में हो रही है, वह उत्साह-वर्धक है । (कश्मीर हिन्दी संस्थान की ओर से कश्मीर के हिन्दी कवियों की कृतियों का एक संकलन प्रकाशित हो रहा है, जो इस बात का द्योतक है कि कश्मीर में हिन्दी का प्रयोग, जो बहुत पुराने समय से चला आ रहा है, वह अब पल्लवित होने की दिशा में है । इससे हमारे विभाग का भी एक प्रकार से हित होता है) विभाग में कश्मीरी भाषा एवं साहित्य पर जो शोध-कार्य किया जा रहा है, उसका कुछ विवरण निम्नलिखित है :—

१. श्री त्रिलोकीनाथ गंजू : कश्मीरी भाषा के उद्‌गम तथा विकास पर शोध-कार्य कर रहे हैं ।
२. कुमारी फूल राजदान : कश्मीरी भाषा के कृष्ण-काव्य पर शोध-कार्य कर रही हैं ।
३. कुमारी विजयमोहिनी कौल : कश्मीरी भाषा की विष्णु-प्रताप रामायण पर शोध-कार्य कर रही हैं ।
४. कश्मीर के प्रसिद्ध हिन्दी कवि श्री शशिशेखर तोषखानी : प्राचीन कश्मीरी के वाणासुर-वध पर शोध-कार्य कर रहे हैं ।
५. श्रीमती रत्नी रैणा : कश्मीर का हिन्दी साहित्य पर शोध-कार्य कर रही हैं ।
६. श्री बुर्जेय छेवाँग : लद्दाख का लोक-साहित्य पर कार्य कर रहे हैं ।

(उपर्युक्त सभी अनुसंधित्सु पी-एच० डी० की दिशा में कार्य कर रहे हैं)

इनके अतिरिक्त लगभग २० परमोत्तम विशेष-प्रबन्ध एम० ए० (उत्तरार्द्ध) की परीक्षा के लिए कश्मीरी विषयों पर लिखे गए हैं । इससे पूर्व डा० भूषणलाल कौल, डा० अमरनाथ तथा श्रीमती मोहिनी कौल (क्रम से) कश्मीरी कवि महजूर, आजाद तथा लल्लेश्वरी पर पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त कर चुके हैं । इसी दिशा में आगे बढ़ने के लिए

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग

से विभाग को १०,०००) रु० का अनुदान प्राचीन पाण्डुलिपियों को खरीदने के लिए मिला है तथा २०,०००) रु० का अनुदान अन्य वैज्ञानिक उपकरणों के लिए मिला है, जिनसे विभाग में पाठ-शोध आदि शोध-कार्यों में सहायता मिलेगी । यह धन-राशि विभाग को मिल चुकी है और उसके उचित प्रयोग के लिए कदम उठाए जा रहे हैं । इस समय विभाग में नौ अनुसंधित्सु पी०-एच० डी० की दिशा में शोध-कार्य कर रहे हैं । इस वर्ष नयी पूर्वार्द्ध की कक्षा में प्रवेश के हेतु १२५ विद्यार्थियों ने आवेदन किया था, जिनमें से केवल ४९ ही लिए जा सके, तथा उनमें से छः विद्यार्थियों को भारत सरकार की १००) रु० प्रतिमास की छात्र-वृत्ति दी गई ।
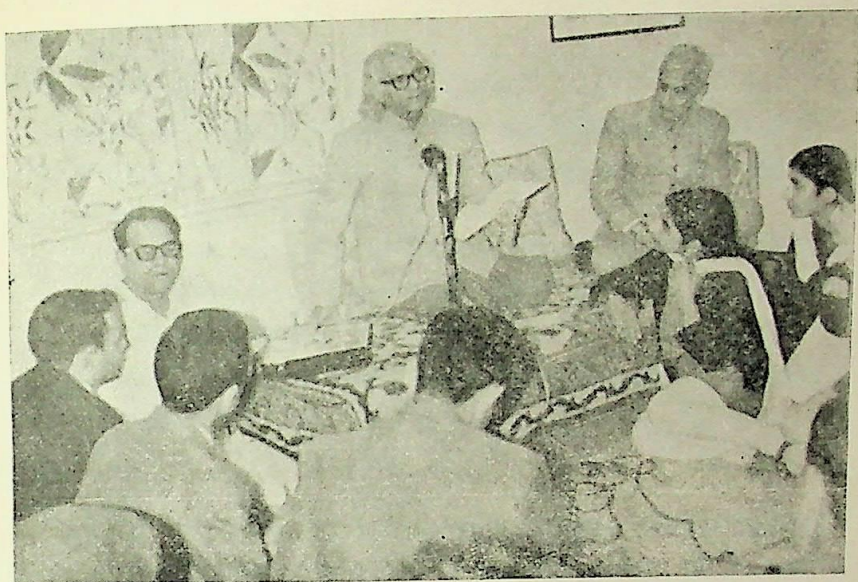
कविवर श्री सुमित्रानन्दन पन्त का श्रीनगर की कवि-गोष्ठी में कविता-पाठ ।
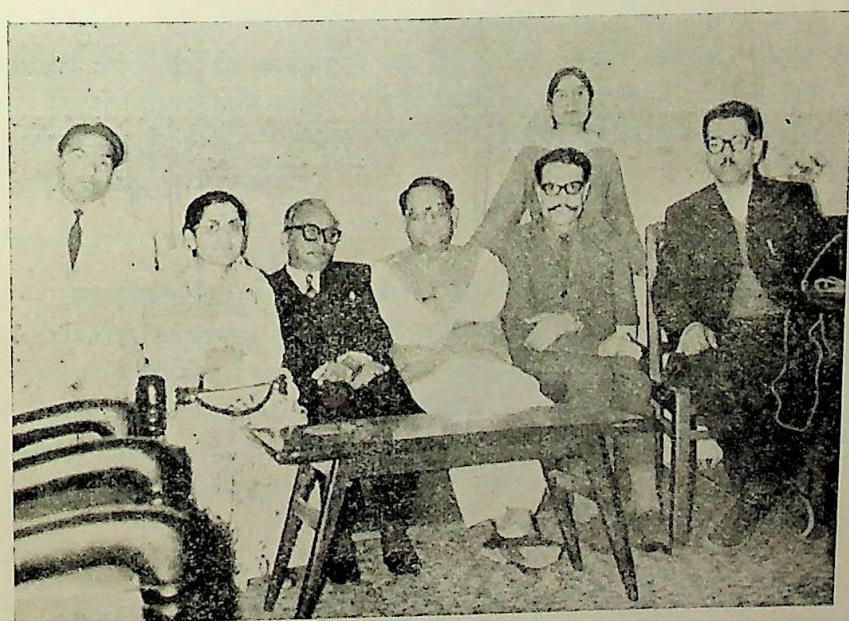
श्री भगवती चरण वर्मा, विभाग के अध्यापकों के साथ ।
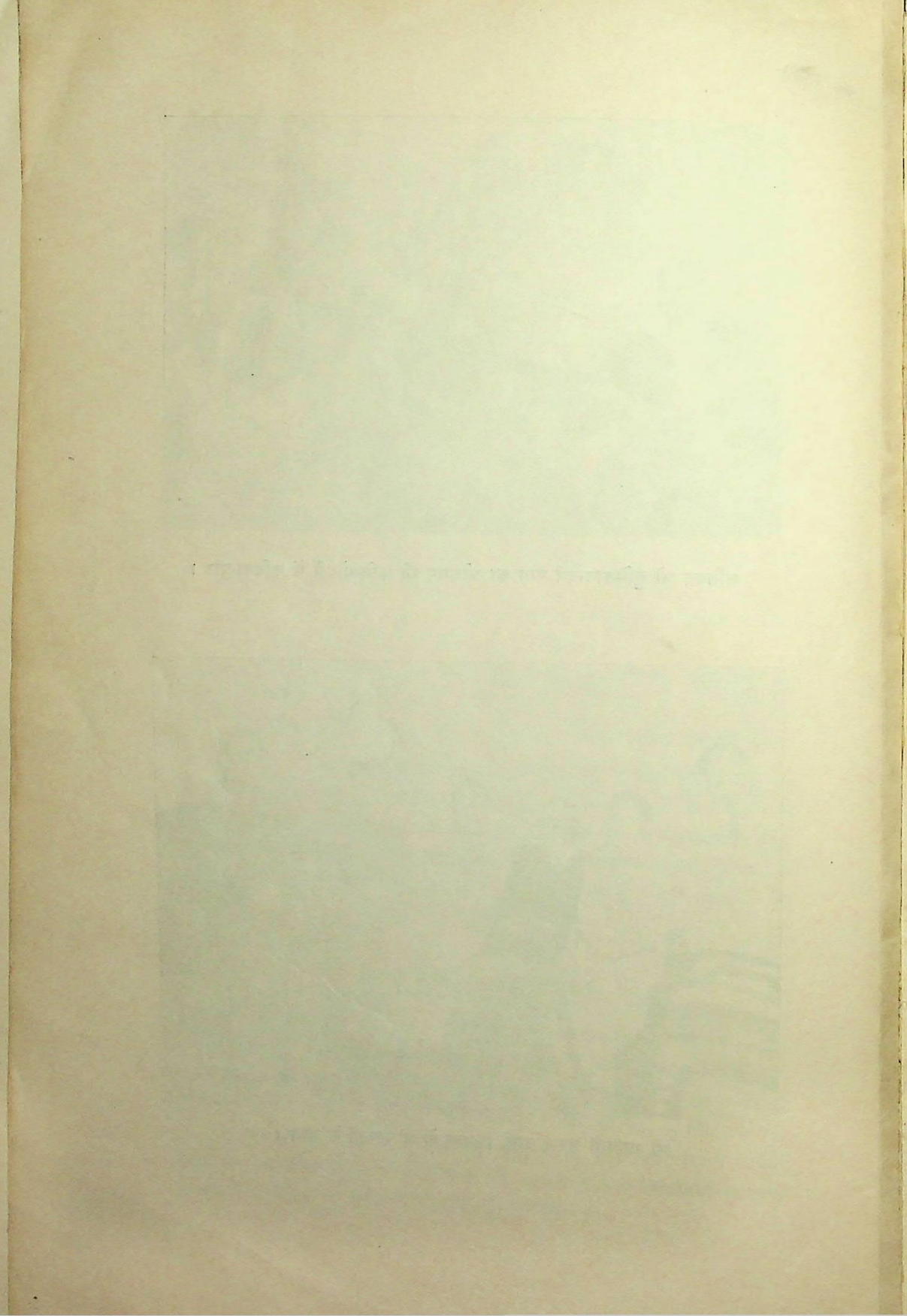
बधाई

इस सत्र में विभाग के निम्नलिखित जिन तीन अनुसंधित्सुओं को पी०-एच० डी० की उपाधि से सुशोभित किया गया है, उन्हें विभाग की ओर से तथा 'वितस्ता' परिवार की ओर से हम बधाई देते हैं :—

१. श्री अमरनाथ (आज़ाद तथा दिनकर के काव्य का तुलनात्मक अध्ययन) ।

२. श्री मोहनलाल बाबू (यशपाल तथा राँगेय राघव की कहानियों का तुलनात्मक अध्ययन) ।

३. श्रीमती सन्तोष ज़ारू (प्रसाद तथा प्रेमचन्द के नारी पात्रों का तुलनात्मक अध्ययन) ।

स्वागत

इस सत्र विभाग में एक और प्राध्यापक की नियुक्ति हुई है । श्री त्रिलोकीनाथ गंजू, जो विभाग में शोध-कार्य कर रहे थे, प्राध्यापक के रूप में नियुक्त हुए हैं । उनका हम स्वागत करते हैं ।

सरदार पटेल विश्वविद्यालय, आनन्द (गुजरात) के हिन्दी विभाग

के अध्यापक, एम० ए० के छात्र तथा अनुसंधित्सु इस वर्ष कश्मीर-भ्रमण के लिए आये थे । अपने, लगभग सप्ताह भर के, कश्मीर-प्रवास में उन्होंने विभाग में आकर सांस्कृतिक तथा साहित्यिक कार्यक्रमों में भाग लिया । इस प्रकार के सांस्कृतिक आदान-प्रदान से दोनों अहिन्दी-भाषी प्रदेशों के हिन्दी शिक्षकों एवं विद्यार्थियों को लाभ होता है । हमें हर्ष है कि विभाग ने सरदार पटेल वि० वि० के अतिथियों के कश्मीर-प्रवास को सुखद बनाने में योग दिया ।

मान्य अतिथि

येन-केन-प्रकारेण हम इस बात का प्रयत्न करते रहते हैं कि विभाग में हिन्दी के साहित्यकारों का आगमन हो तथा उनसे हमारे विद्यार्थी कुछ ग्रहण करें । इस दिशा में हिन्दी के विद्वानों से हमें जो सहयोग मिलता रहा है उसके लिए हम उनके आभारी हैं । पिछले सत्र में कविवर पं० सुमित्रानन्दन पन्त, कथाकार एवं कवि श्री भगवती चरण वर्मा तथा डा० नगेन्द्र नगाइच ने विभाग में पधारने की कृपा की तथा विद्यार्थियों को अपने भाषणों एवं कविता-पाठ से लाभान्वित किया ।

धन्यवाद

'वितस्ता' का यह अंक विलम्ब से निकल रहा है । इसका हमें खेद है । अनेक कारण हैं इसके—जिनमें एक यह भी है कि सम्पादक दो बार दुर्घटना-ग्रस्त हो गया था । एक कारण विश्वविद्यालय से अनुदान की स्वीकृति का विलम्ब भी है । आशा है, भविष्य में 'वितस्ता' को समय से प्रकाशित किया जा सकेगा ।

'वितस्ता' के प्रकाशन का जितना कुछ भी श्रेय है उसका एक काफी बड़ा भाग श्री गुलाबसिंह यादव को भी जाता है, जो अपने प्रेस में 'वितस्ता' का मुद्रण बड़े स्नेह तथा त्याग की भावना से करते हैं। अहिन्दी-भाषी प्रदेश की पत्रिका के प्रति वे लाभ का दृष्टिकोण न रखकर हिन्दी चार-प्रेम का दृष्टिकोण रखते हैं, जो कि आज की व्यापारी-दुनियाँ में दुर्लभ है। हम उनके आभारी हैं। उनके अतिरिक्त डा० ओंकार प्रसाद माहेश्वरी (सह-आचार्य हि॰ विभाग, आगरा कालिज, आगरा) के प्रति भी मैं स्नेहाभार प्रकट करता हूँ, जिन्होंने यथापूर्व 'वितस्ता' के प्रूफ के देखने में मेरी सहायता की है।

—**रमेशकुमार शर्मा**

⁘+⁘+⁘

माधव नैंकु हटको गाइ।
भ्रमत निसि-बासर अपथ-पथ, अगह गहि नहिं जाइ।
अष्ट-दस-घट नीर अँचवति, तृषा तऊ न बुझाइ।
छुधित अति न अघात कबहूँ, निगम-द्रुम दलि खाइ।
और अहित अभच्छ भच्छति, कला बरनि न जाइ।
भुवन चौदह खुरनि खूंदति, सुधौं कहाँ समाइ।
ढीठ, निठुर, न डरति काहू, त्रिगुन ह्वै समुहाइ।
रचि बिरचि मुख-भौंह-छबि, लै चलति चित्त चुराइ।
नारदादि सुकादि मुनिजन, थके करत उपाइ।
ताहि कहु कैसे कृपानिधि, सकत सूर चराइ।

वितस्ता

(दिसम्बर १९७०)

सम्पादक :

डा० रमेशकुमार शर्मा,
आचार्य एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग,
कश्मीर विश्वविद्यालय,
अमरसिंहबाग, श्रीनगर, कश्मीर (भारत)

●

सहायक :

डॉ० भूषणलाल कौल
नीना कौल एम० ए० (अनुसंधित्सु)
कौशल्या चल्लू एम० ए० (उत्तरार्द्ध)
विजय दर एम० ए० (पूर्वार्द्ध)

●

प्रकाशक :

हिन्दी परिषद्
हिन्दी विभाग, कश्मीर विश्वविद्यालय
अमरसिंहबाग, पो० नसीमबाग, श्रीनगर,
कश्मीर (भारत)।

एक प्रति—२ रु०

खण्ड ६, अङ्क १

राष्ट्र-गान

जन-गण-मन अधिनायक जय हे !

भारत भाग्य विधाता

पंजाब सिन्धु गुजरात मराठा, द्राविड़ उत्कलबंग,

विंध्य हिमाचल यमुना गंगा उच्छल जलधितरंग,

तव शुभनामे जागे, तव शुभ आशिष माँगे,

गाहे तव जय गाथा,

जन-गण मंगलदायक जय हे, भारत भाग्य विधाता

जय हे, जय हे, जय हे !

जय, जय, जय, जय हे !!

●

VITASTA

Journal of the Hindi Parishad of the Department of Hindi, University of Kashmir, Amarsinghbag, Srinagar, Kashmir, INDIA.

Vol. VI DECEMBER 1970 No. 1

मुद्रक : आगरा फाइन आर्ट प्रेस, राजामण्डी, आगरा-२